September 2022

अरफ़ात किरण

मिल्लत–ए–इस्लामिया का फ़र्ज़–ए–मन्सबी

"मिल्लते इस्लामिया को क़ाफ़िला–ए–इन्सानियत की क़यादत और दुनिया की निगरानी और अक़ाएद व अख़लाक़ और इन्फ़िरादी व बैनुल अक़वामी ताल्लुक़ात पर नज़र रखनी चाहिए। इसलिए कि क़ौमें सिर्फ़ तारीख़ के सहारे या अपनी अज़मते रफ़्ता और पिछली कामरानियों के बदौलत नहीं, बल्कि जहद–ए–मुसलसल, दायमी सरगर्मी, मुस्तक़िल एहसास–ए–ज़िम्मेदारी, हमा दम कुर्बानी के लिए आमादगी, जिद्दत व नुदरत और अपनी ताज़ाकार क़ूव्वते इफ़ादियत व सलाहियत के बल पर ज़िन्दा व ताबन्दा रहती हैं, वह जब अपने मन्सब व मक़ाम को छोड़कर गोशा–ए–आफ़ियत में चली जाती हैं तो तारीख़ के दफ़्तरे पारीना का हिस्सा बन जाती हैं और ज़माना उन्हें ताके निस्यां पर रख देता है, इसीलिए उम्मत–ए–मुहम्मदिया (स०अ०व०) के लिए ज़रूरत है कि वह नए सिरे से अपनी दावती, तहज़ीबी और क़ायदाना किरदार के साथ सरगर्मे सफ़र हो।"

— मुफ़क्किर–ए–इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

मर्कजुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

इल्ज़ाम लगाना

"रसूल–ए–करीम (स0अ0व0) के ज़माने में जब बाज़ मुनाफ़िक़ीन की शरारत से उम्मत की सबसे बड़ी मोमिना सिद्दीक़ा पर एक निहायत गन्दी तोहमत लगी और उसके चर्चे फैले तो कलामे मजीद में यह दो आयतें नाज़िल हुईं: "जब तुम लोगों ने यह गन्दी हिकायत सुनी थी तो मुसलमान मर्दों और औरतों ने अपने लोगों के मुताल्लिक़ नेक गुमान से काम क्यों न लिया और छूटते ही क्यों न कह दिया कि यह सरीह इफ़्तिरा है।" (सूरह नूरः 12) "और जब तुम्हारे कानों तक यह गन्दी हिकायत पहुंची थी उसी वक़्त तुमने क्यों न कह दिया कि हमको ऐसी कोई बात मुंह से भी नहीं निकालना चाहिए, मआज़ अल्लाह! यह तो बड़ी सख़्त तोहमत है, अल्लाह तुम्हें हुक्म देता है कि अगर तुम ईमान वाले हो तो ऐसी हरकत फिर कभी हरगिज़ न करना।" (सूरह नूरः 16–17)

ख़बर के गढ़ने का ज़िक्र नहीं, इल्ज़ाम तराशी का मज़कूर नहीं, गढ़ी हुई ख़बर के सिर्फ़ कुबूल करने और बे सोचे–समझे उसके चर्चे करने पर यह डांट पड़ रही है। किसी मुसलमान पर इफ़्तिरा तो कोई मुसलमान क्यों करने लगा। किसी इल्ज़ाम को कुबूल करना और उसकी इशाअत में लगना भी किसी मुसलमान का काम नहीं हो सकता है। इरशाद होता है कि ऐसी नामअकूल रिवायतों और हिकायतों के सुनने के साथ उन्हें रद्द कर देना चाहिए और किसी मुसलमान की इज़्ज़त पर हमला सुनकर उसके कुबूल करने से साफ़ इनकार कर देना चाहिए। वह मुसलमान कैसा जो दूसरे मुसलमान की दयानत पर इज़्ज़त पर अख़लाक़ पर हमला होते हुए देखे और चुपके बैठा रहे। या यह ही क्या आज दुनियाए इस्लाम के किसी गोशे में इस पर अमल है। पब्लिक जलसे हों या घरों के अन्दर तख़्लिया की सोहबतें, अख़बार के मक़ाले हों या खानगी खुतूत, कहां यही चर्चे, यही तज़किरे नहीं कि फ़लां लीडर क़ौम का पैसा खा गया, फ़लां मौलाना साहब छुपे रुस्तम निकले, शहर के क़ाज़ी साहब की यह हरकतें ज़ाहिर हुईं, उसके यहां की बहू–बेटियों तक की इज़्ज़त का ठीक नहीं, जहां चार मुसलमान जमा हुए न ख़ुदा का ज़िक्र, न रसूल का, न मौत की याद, न आख़िरत की फ़िक्र, सिर्फ़ गीबतें हैं तो मुसलमानों की और बदगोइया हैं तो अपने ही भाई–बन्दों की एक–एक घर के पतरे खुल रहे हैं और दुनिया जहां का कोई ऐब, कोई इल्ज़ाम ऐसा नहीं जो ख़ुद मुसलमानों ही की ज़बान से मुसलमानों पर न लग रहा हो। तोहमतें तराशने वाले मुसलमान इन पर यक़ीन करने वाले मुसलमान, इन्हें फैलाने वाले मुसलमान, नतीजा रंजिशों, अदावतों, मुक़द्दमा बाज़ियों, फ़ौजदारियों की सूरत में रोज़ाना मौजूद है। लेकिन ज़बान की चाट ऐसी पड़ी हुई है कि सारी तकलीफ़ें गवारा लेकिन इन चर्चों और तज़किरों से हाथ उठाना नामुमकिन।

मुफ़स्सिर-ए-कुरआन मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी (रह0)

(सच्ची बातेंः 59-61)

بِسۡمِ ٱللَّهِ ٱلرَّحۡمَٰنِ ٱلرَّحِيمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक: 9 सितम्बर 2022 ई० वर्ष: 14

संरक्षक: हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष - दारे अरफ़ात)

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुबहान नारवुदा नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

मुद्रक

मो० हसन नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

लड़ाई-झगड़े की मनाही

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"क्या मैं तुम्हें ऐसी चीज़ के बारे में न बताऊं जो मर्तबे के लिहाज़ से रोज़ा, नमाज़ और सदक़ा से भी अफ़ज़ल हो? सहाबा ने अर्ज़ किया: क्यों नहीं ज़रूर बताइये। रसूलुल्लाह (स०अ०व०) ने इरशाद फ़रमाया: आपस में सुलह (मेल-जोल) कराना है, इसलिए कि आपस

सुनन तिरमिज़ी: 2509

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली, यू०पी० 229001

प्रति अंक 15रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण, मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

ये रुत्बा किस ने पाया है ...

मुहम्मद समआन ख़लीफ़ा नदवी

दरूदों में सलामों में तरानों में अज़ानों में
नबी का नाम ताबां है ज़मीनों आसमानों में।

कोई बदबख़्त क्या जाने नबी की शाने रिफ़अत को?
ख़ुदा और सब मलाएक हैं नबी के मदह ख़्वानों में।

शबे इसरा में सिदरा ने क़दम चूमें हैं आक़ा के
ये रुत्बा किसने पाया है भला सारे जहानों में।

बलाएं चांद लेता था नबी के रुए अनवर की
किसी ने ऐसा देखा है हसीं अब तक ज़मानों में?

रुख़े अनवर को ऐ दिलबर! निगाहे शौक़ से देखूं
तेरी तस्वीर को चूमूं ख़्यालों में गुमानो में।

भला कोई जहां में है पसीना जिसका ऐसा हो?
मुअत्तर उससे ख़ुशबूए ख़तन हो इजदानों में।

तेरे कूचे से जो बादे नसीमे मुश्क बार आयी
महक उठीं हैं कलियां मेरे दिल के गुलिस्तानों में।

मेरे महबूब कैसे हैं तेरे दुश्मन को बतलाऊं?
कि ज़िक्रे ख़ैर तेरा है सभी वेदों पुराणों में।

हिकायत है तेरे हुस्ने अमल की ज़िन्दा-जावेद
तेरी तमसील क्या मिलती किसी को दास्तानों में।

नबी प्यारे तो उनकी बात भी क्योंकर न प्यारी हो
हुआ समआन भी हुस्ने नबी के क़द्रदानों में।

इस अंक में:

एक चिराग़ और बुझा.....3
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

दीन-ए-इस्लाम की नुमायां ख़ुसूसियात.....4
हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी

ज़रिए की हैसियत और ख़ुदा का फ़ैसला.....6
हज़रत मौलाना सैय्यद राबे हसनी नदवी

बेकुसूर गिरफ़्तार मज़लूमों की मदद.....7
मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी

समाज में एक नए बदलाव की ज़रूरत.....9
मौलाना अज़ीज़ुल हसन सिद्दीक़ी

सच्चाई क्या है?.....10
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

निकाह के चन्द मसाएल (4).....12
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

इल्म को छुपाना-एक संगीन जुर्म.....15
अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

मौलाना अली मियाँ नदवी (रह0) का मज़ाक़े शेर व सुख़न.....17
मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

फ़िलिस्तीन का मंज़रनामा.....19
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

सम्पादकीय

एक चिराग़ और बुझा

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

बहुत से अल्फ़ाज़ इस्तेमाल की कसरत से अपने माने खो देते हैं, उनमें ''दाग़–ए–मफ़ारक़त'' भी है, लेकिन अज़ीज़ी महमूद ने मफ़ारक़त का जो दाग़ दिया मुश्किल है वह हल्का हो सके। वह उम्र में मुझसे तक़रीबन दो साल छोटे थे, बचपन में हम दोनों का साथ था जो आख़िर तक रहा। उनको दीन का ज़ौक़ बचपन से हासिल था, जो उम्र के साथ बढ़ता गया। वह अपनु ज़ुहद और दुनिया से बेरग़बती में बहुत आगे आ गए। हर काम में उनके सामने दीनी फ़ायदा होता। दुनिया के किसी अदना फ़ायदे से उनको कोई रग़बत न थी। उनको शुरू से ही बुज़ुर्गों से इस्तिफ़ादे का शौक़ था। मशाएख़े अस्र की ख़ास तवज्जो व शफ़क़त उनको हासिल रही। बहुत से मशाएख़ से उनको इजाज़त व ख़िलाफ़त भी मिली, मगर उन्होंने कहीं इसका इज़हार नहीं होने दिया।

मुफ़क्किर–ए–इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0) की उन पर ख़ास शफ़क़त थी। आख़िर में वह हज़रत के इल्मी कामों के मुआविन बने। ख़ास तौर पर कारवाने ज़िन्दगी की आख़िरी जिल्द की तकमील जो हज़रत ने माज़ूरी के ज़माने में की' महमूद ने हवालों की तलाश में बड़ी मदद की और हज़रत की दुआएं लीं। उसके मुक़द्दमें में हज़रत ने उनका तज़किरा किया और दुआएं दीं, उनकी वफ़ात के बाद वह हज़रात शेख़ैन के होकर रह गए। सफ़र व हज़र में जानशीने मुफ़क्किर–ए–इस्लाम हज़रत मौलाना मुहम्मद राबे हसनी नदवी के साथ रहे। सफ़रनामे भी लिखे और हज़रत मद्दाज़िल्लहुल आली के इल्मी कामों में ख़ास मुआविन रहे, यहां तक कि जान जाने आफ़रीं के सुपुर्द कर दी।

उनको लिखने का ज़ौक़ रोज़नामा लिखने से पैदा हुआ। फिर वह हज़रत मौलाना (रह0) का रोज़नामचा लिखने लगे। दसियों डायरियां लिख डालीं, जो अब एक यादगार और एक बड़ा ख़ज़ाना है। स्वानेह निगारी का ज़ौक़ उनको अपने नाना हज़रत मौलाना मुहम्मद सानी हसनी (रह0) से मिला जो मज़ीद परवान चढ़ा। दसियों ज़ख़ीम किताबें उन्होंने कम वक़्त में तैयार कर दीं। उनका क़लम सियाल था। लिखते तो एक ही नशिश्त में दस–दस बीस–बीस सफ़े लिख डालते। उनका हाफ़िज़ा मज़बूत था। मराजेअ उनकी निगाहों के सामने थे। लिखना उनकी हाबी (Hobby) थी। वफ़ात से चन्द दिन पहले वह चण्डीगढ़ जाने के लिए लखनऊ आए थे। अपने कमरे में थे। हम अन्दर थे तो देखा कि कुछ लिख रहे हैं। हमने कहा कि ''महमूद अपने ऊपर रहम करो।'' बोले कि ''मौलाना यूनुस साहब ने बड़ी अच्छी एक बात फ़लां जगह लिखी, ख़्याल आया कि नोट कर लें।'' जिन बुज़ुर्गों के उन्होंने सवानेह हयात लिखे, उनमें मौलाना अब्दुल बारी साहब नदवी, मौलाना शाह अबरारुल हक़ हक्क़ी, मौलाना ज़ुबैरुल हसन कांधलवी, मौलाना मुहम्मद यूनुस जौनपुरी, मौलाना अब्दुल्लाह हसनी, मौलाना अब्दुल बारी भटकली नदवी शामिल हैं। मौलाना सलमान साहब मज़ाहिरी की सवानेह भी बड़ी हद तक मुकम्मल हो रही थी। ''आयशा बी'' के नाम से ख़ानदान की बुज़ुर्ग ख़ातून हज़रत मौलाना (रह0) की, हमशीरा उम्मत उल्ला तस्नीम की मुकम्मल सवानेह लिखी। इनके अलावा तारीख़ इस्लाह व तरबियत की दो ज़ख़ीम जिल्द तबअ हुईं, दस जिल्दों का ख़ाक़ा उनके ज़हन में था, मज़ीद दो जिल्दों का मवाद तैयार है, तीसरी जिल्द मुकम्मल हो चुकी थी जो इंशाअल्लाह जल्द ही छपेगी, सलासिले अरबा उनका मक़बूल रिसाला है जो शायद लाखों की तादाद में छपा और न जाने कितनी किताबें उन्होंने दूसरों से लिखवाईं, कभी ख़ुद लिख–लिख कर दीं।

वह बड़े ज़ाकिर व शाग़िल थे। ज़िक्र से उनको शुरू से मुनासबत थी। क़द्रे जहर से ज़िक्र करते। तिलावत का भी अच्छा मामूल था। हर एक से ख़न्दा पेशानी से मिलते। ताल्लुक़ वालों को एयरपोर्ट या स्टेशन लेने जाते फिर छोड़ने जाते। हर एक के काम आते, खिलाने–पिलाने का शौक़ था।

हक़ बात कहने में उनको कोई बाक नहीं था, ''बुरा–भला कहने वालों से डरता नहीं'' का मिस्दाक़ थे। आख़ीर में सहाबा के दिफ़ा में तेज़ धार वाली तलवार की तरह थे। अल्लाह के लिए उनको किसी की परवाह नहीं होती थी। ग़लत काम पर टोकते, शार्गिदों की रहनुमाई करते और उनको कामयाबी के रास्ते बताते, न जाने कितनो को उन्होंने काम पर लगा दिया और कितनो को मुसन्निफ़ बना दिया।

अल्लाह ने अज़ीज़ मौसूफ़ को बड़ी सिफ़ात और बड़ी ख़ूबियों से नवाज़ा था, जो यक़ीनन दूसरी दुनिया में उनके काम आ रही होंगी, लेकिन हम लोगों के लिए यह बड़ा ख़सारा है। अल्लाह तआला रहम का मामला फ़रमाए और जाने वाले पर सब्र दे और बाक़ी रहने वालों को सेहत व आफ़ियत के साथ रखे। उम्र की पचास बहारें उन्होंने देखीं, लेकिन काम सौ साल का कर गए।

दीन-ए-इस्लाम की नुमायां ख़ुसूसियात

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

इस कायनात में हर ज़िन्दा और मुतहर्रिक शय का एक ख़ास मिज़ाज कुछ नुमायां खुसूसियात और उभरे हुए ख़त व ख़ाल होते हैं जिनसे उसकी शख़्सियत की तस्ख़ीर और उसका तअय्युन होता है और वह उसकी सिफ़ात मुम्ययज़ा क़रार पाती हैं। इसमें अफ़राद, जमाअतें, मिल्लतें और क़ौमें मज़ाहिब और फ़लसफ़े यकसां तौर पर शरीक हैं। वह सब अपनी कुछ इम्तियाज़ी खुसूसियात और नुमाया अलामात रखते हैं। इसलिए यह दरयाफ़्त और तहक़ीक़ हक़ बजानिब है कि दीने इस्लाम की सिफ़ाते मुमयज़्ज़ा और उसकी शख़्सियत के सही ख़त व ख़ाल क्या हैं? दीन की तफ़सीलात, तालीमात, हिदायात और मुअययन क़वावीन व ज़वाबित मे मुताले और जुस्तुजू से पहले हमें इस हक़ीक़त से बाख़बर होना चाहिए क्योंकि दीन से मुकम्मल तौर पर फ़ायदा उठाने और उसके रंग में रंग जाने के लिए यही फ़ितरी तरीक़ा और इसके क़फ़ल की शाहे कलीद है।

सबसे पहले हमें इस हक़ीक़त को ज़हन में रख लेना चाहिए कि यह दीन हम तक हकीमों और दानिशवरों, माहिरीने क़ानून, उल्माए अख़लाक़ व नफ़िसयात, किश्वर कुशा और क़ानूनसाज़ बानियाने सल्तनत ख़्याली घोड़े दौड़ाने वाले फ़लसफ़ी और तालेअ उज़्मा, सियासी रहनुमाई और ताले उज़्मा और क़ौमों के क़ायदीन के ज़रिये नहीं पहुंचा। यह दीन हम तक उन अम्बियाए किराम के ज़रिए पहुंचा है जिनके पास ख़ुदा तआला की वही आती थी और जिनका सिलसिला ख़ातिमुन्नबीयीन (स0अ0व0) पर ख़त्म हो चुका है। हज्जतुल विदाअ के मौक़े पर अरफ़ात के दिन यह आयत नाज़िल हुई थीः

"आज हमने तुम्हारे लिए दीन कामिल कर दिया और अपनी नेमत तुम पर पूरी कर दी और तुम्हारे लिए इस्लाम को दीन पसंद किया।" (सूरह अलमाइदाः 03)

इस दीन का सबसे पहला इम्तियाज और नुमाया शेआर अक़ीदे पर ज़ोर व इसरार और सबसे पहले इसका मसला हल कर लेने की ताकीद है। अम्बिया के नज़दीक बेहतर से बेहतर अख़लाक़ी ज़िन्दगी और आला से आला इन्सानी किरदार का हामिल नेकी व सलामत रवी और माकूलियत का ज़िन्दा पैकर और मिसाली मुजस्समा ख़्वाह उससे बेहतर किसी हुकूमत का पयाम, किसी सालेह मुआशरा का वजूद और किसी मुफ़ीद इन्क़िलाब का क़याम व जुहूर हुआ हो। उस वक़्त तक कोई क़द्र व क़ीमत नहीं रखता, जब तक वह इस अक़ीदे का मानने वाला न हो, जिसको वह लेकर आए और जिसकी दावत उनकी ज़िन्दगी का नस्बुल ऐन है और जब तक उसकी यह सारी कोशिशें और काविशें सिर्फ़ उस अक़ीदे की बुनियाद पर न हों। यही वह हद्दे फ़ासिल और वाज़ेह व रोशन ख़त है जो अम्बियाए किराम की दावत और क़ौमी रहनुमाओं, सियासी लीडरों, इन्क़िलाबियों और हर उस शख़्स के दरमियान खींच दिया गया है जिसका सरचश्मा फ़िक्र व नज़र अम्बियाए किराम की तालीमात और सीरतों के बजाए कोई और हो।

दूसरी बात यह कि अम्बियाए किराम (जिनमें सरे फ़ेहरिस्त नबी करीम स0अ0व0 की ज़ाते गिरामी है) की दावत व तब्लीग़ और जहद व जिहाद का हक़ीक़ी मुहर्रिक और सबब महज़ ख़ुदा तआला की रज़ा और ख़ुशनूदी की तलब होती है। यह एक ऐसी तेज़ तलवार है जो इ समक़सदे आला के अलावा हर मक़सद को काटती और नेस्त व नाबूद कर देती है। फिर न मताए दुनिया की तलब रहती है और न मुल्क व दौलत और सल्तनत व रियासत की चाहत, न सरबुलन्दी व इज़्ज़त की ख़्वाहिश, न ग़ल्बाए इक़्तिदार की हविस, न सरबुलन्दी, माल व मनाल और ऐश व तनम की तमन्ना, न ग़ज़ब व इन्तिक़ाम का जज़्बा, न जाहिली हमीयत का जोश, इनमें से कोई चीज़ भी उनको जद्दोजहद और जिहाद पर नहीं उभारती।

इसका मतलब यह नहीं है कि वह क़ूव्वत व ताक़त

जिसके ज़रिये मुसलमान एहकामे ख़ुदावन्दी का निफ़ाज़ कर सकता है और दावत की राह में पेश आने वाली रुकावटों को हटा सकता है और जिसके ज़रिये ज़मीन में फ़साद और ज़ुल्म और बातिल के ग़ल्बे की आग बुझा सकता है। मिसाली इस्लामी ज़िन्दगी और शरीफ़ त मतदीन इस्लामी मुआशरे के लिए साज़गार माहौल तैयार हो सकता है। वह क़ाबिले तवज्जे और लायक़े फ़िक्र व एहतिमाम हरगिज़ नहीं। यह तसव्वुर ग़ैर इस्लामी है और इस रहबानियत का परतो जिसके लिए अल्लाह तआला ने कोई दलील और सनद नाज़िल नहीं फ़रमायी।

दीन की तीसरी ख़ासियत यह है कि अम्बियाए किराम इन अक़ाएद व दावत व पैग़ाम व शरीअत के बारे में जिसको वह लेकर आते हैं बड़े ग़यूर और ज़कीउल हिस्स वाक़ेअ होते हैं। वह किसी हाल में भी (ख़्वाह दावत की मक़बूलियत और कामयाबी की मस्लहत ही का तक़ाज़ा क्यों न हो) इसके लिए तैया नहीं होते कि अपनी दावत और शरीअत में तरमीम या तग़ययुर या तब्दील गवारा कर लें। उनके यहां मदाहनत और तब्दीली–ए–मौकिफ़ की गुंजाइश नहीं होती। अल्लाह अपने पैग़म्बर (स0अ0व0) को मुख़ातिब करके फ़रमाता है: "ऐ पैग़म्बर! जो इरशादात तुम पर ख़ुदा की तरफ़ से नाज़िल हुए हैं, सब लोगों को पहुंचा दो और अगर ऐसा न किया तो तुम ख़ुदा के पैग़ाम पहुंचाने में क़ासिर हो और ख़ुदा तुमको लोगों से बचाए रखेगा।" (सूरह माइदाः 67)

नुबूव्वत की इम्तियाज़ी ख़ासियत और अम्बिया–ए–किराम की दावत के ख़त व ख़ाल में एक नुमायां पहलू यह भी है कि उनका अस्ल ज़ोर आख़िरत की ज़िन्दगी और उसकी कामयाबी और सआदतों के हुसूल पर होता है, वह इसका इस कसरत से तज़किरा करते हैं और इसका इस दर्जे इहतिमाम व फ़िक्र कि वह उनकी दावत का मरकज़ी नुक़्ता व महवर बन जाती है, साफ़ ज़हन के साथ उनके वाक़्यात व अक़वाल का मुताला करने वाला साफ़ महसूस करता है कि आख़िरत उनका नस्बुल ऐन है और उनके लिए एक मरई और बदीही हक़ीक़त है। यह बात उनकी फ़ितरते सानिया बन जाती है और इसका यक़ीन उनके एहसासात और फ़िक्र व दिमाग़ पर छाया हुआ नज़र आता है। अल्लाह ने अपने मोमिन व मुतीअ बन्दों के लिए आख़िरत में जो नेमतें मुक़द्दर कर रखी हैं और काफ़िरों और नाफ़रमानों के लिए वहां जो अज़ाब मुक़र्रर फ़रमाया है, उसका हमावक़्त ख़्याल ही वह हक़ीक़ी मुहरिक है जो उनको अक़ीदे की तस्हीह, ज़िन्दगी की इस्लाह और रिश्ता–ए–उबूदियत की इस्तवारी की दावत पर उभारता है। वह उनको बेचैन रखता है और उनकी रातों की नींद और दिन का इत्मिनान इस तरह उड़ा देता है कि उनको किसी पहलू क़रार नहीं आता।

पांचवा अम्र यह है कि इसमें कोई शक नहीं कि अल्लाह तआला ही हाकिम हक़ीक़ी और फ़रमारवा–ए–मुतलक़ है, लेकिन दर हक़ीक़त ख़ालिक़ व मख़लूक़ और अब्द व माबूद का ताल्लुक़, हाकिम व महकूम, अम्र व मामूर और एक बादशाह और रईयत के ताल्लुक़ से कहीं ज़्यादा वसीअ, कहीं ज़्यादा अमीक़, कहीं ज़्यादा लतीफ़ और कहीं ज़्यादा नाज़ुक है।

इस दीन की एक ख़ासियत यह भी है कि वह अपनी अस्ल हक़ीक़त, ज़िन्दगी और तरो ताज़गी के साथ बाक़ी है, उसकी किताब महफ़ूज़ और हर दौर में क़ाबिले फ़हम है, इसकी हामिल उम्मत आम गुमराही और जिहालत उस इज्तिमाई इन्हिराफ़, फ़रेब ख़ुर्दगी और किसी साज़िश का शिकार हो जाने से महफ़ूज़ है जिसमें बहुत से मज़ाहिब व मिल्लतें अपनी तारीख़ के किसी दौर में और पैरवाने मसीहियत बिल्कुल इब्तिदा ही में मुब्तिला हो गए थे। कुरआन का यह ऐज़ाज़ और मिन जानिब अल्लाह होने की दलील है कि उसने कुरआन मजीद की सबसे ज़्यादा पढ़ी जाने वाली सूरह फ़ातिहा में ईसाईयों को "वलज़्ज़ाल्लीन" का लक़ब दिया है, इस लफ़्ज़ और वसफ़ के (जो यहूदियों के वस्फ़ "मग़ज़ूबे अलैहिम" से अलग है) की तख़्सीस का राज़ वही समझ सकता है जो मसीहियत की तारीख़ और उसके नशो व इरतिक़ा के मराहिल से बख़ूबी वाक़िफ़ है।

आख़िरी बात यह कि इस्लाम को एक मुआविन फ़िज़ा बल्कि ज़्यादा वाज़ेह और मोहतात अल्फ़ाज़ में एक मुनासिब मौसम तय दर्जा हरारत व बरूदत की ज़रूरत है, क्योंकि वह एक ज़िन्दा इन्सानी दीन है, वह कोई अक़्ली या नज़रयाती फ़लसफ़ा नहीं जो सिर्फ़ दिमाग़ के किसी ख़ाने या कुतुब ख़ाने के किसी गोशे में मौजूद व महफ़ूज़ है, वह एक साथ अक़ीदा व अमल, सीरत व अख़लाक़, जज़्बात व एहसासात और ज़ौक़ के मजमूए का नाम है।

ज़रिए की हैसियत और ख़ुदा का फ़ैसला

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

अल्लाह ने हज़रत मूसा व ख़िजर (अलैहिस्सलाम) के क़िस्से से "ज़रिया" और "अल्लाह का फ़ैसला" के दरमियान फ़र्क़ करके दिखा दिया। अगर उन दोनों का सफ़र जारी रहता तो शायद इस तरह के दसियों वाक़्यात हमारे सामने आते जिनसे पता चलता कि अल्लाह ज़राए की बुनियाद पर जारी व सारी अपने निज़ाम में अपने हुक्म से तब्दीली करने पर कैसा क़ादिर है, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने एक मौक़े पर फ़रमायाः

"अल्लाह तआला मूसा पर रहम करे, मुझे आरज़ू थी कि काश व सब्र करते, यहां तक कि हमें उनकी और बातें मालूम होतीं।" (सही मुस्लिमः 6313)

क़ुरआन में हज़रत मूसा और ख़िज़र (अलैहिस्सलाम) का वाक़्या अल्लाह तआला ने बतौर मिसाल समझाने के लिए बयान किया है। इसके बाद किसी शख़्स का यह धोखा नहीं होना चाहिए कि कोई काम उसकी वजह से हो रहा है या अपने आप से हो रहा है बल्कि सबकुछ एक निज़ाम के मुताबिक़ हो रहा है, वह निज़ाम अल्लाह तबारक व तआला का बनाया हुआ है और वह इस पर मुसलसल निगाह रखे हुए है। इसीलिए वह निज़ाम उतना ही करता है, जितना अल्लाह तआला चाहता है और जब वह चाहता है तो इसमें तब्दीली भी कर देता है, जैसेः अल्लाह तआला ने आग को जलाने का एक ज़रिया बनाया है, उसके अन्दर वही सलाहियत मौजूद है, लिहाज़ा ज़राए के आम निज़ाम के लिहाज़ से अगर किसी शख़्स को आग में डाल दिया जाए तो आग जलाकर ख़ाक कर देगी, लेकिन उसी आग में जब हज़रत इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) को डाला गया तो अल्लाह ने इस आम निज़ाम को तब्दील कर दिया और आग की जलाने की सलाहियत ख़त्म कर दी, क़ुरआन में हैः

"हमने हुक्म दिया कि ऐ आग! इब्राहीम के लिए ठंडी हो जा और सरापा सलामती बन जा और उन्होंने उनके साथ बुरा चाहा था मगर हमने उन्हीं को नुक़सान में ला डाला।" (अम्बियाः 69)

मालूम हुआ आग जलाने का ज़रिया है, मगर अल्लाह के हुक्म की ही पाबन्द है, इसलिए वह तभी तक कारामद रहेगी, जब तक अल्लाह का हुक्म होगा।

इसी तरह ज़ाहिरी ज़राए व निज़ाम के लिहाज़ से हर शख़्स यह बात जानता है कि मरने के फ़ौरन बाद इन्सान का जिस्म सड़ना शुरू हो जाता है और ख़राब हो जाता है, लेकिन हज़रत उज़ैर (अलैहिस्सलाम) के साथ इसके बिल्कुल उल्टा वाक़्या पेश आया, वह सौ साल तक मुर्दा रहे, मगर उनका जिस्म ही नहीं बल्कि उनका खाना और पानी भी बिल्कुल जूं का त्यूं महफ़ूज़ रहा, जबकि उसी जगह पर उनकी सवारी का नाम व निशान तक ख़त्म हो गया, इरशाद हैः

"या उस शख़्स की तरह जो एक बस्ती से गुज़रा जो साएबानों के बल गिरी पड़ी थी वह बोला कहां से इसको मरने के बाद ख़ुदा ज़िन्दा करेगा तो अल्लाह ने ख़ुद उसको सौ साल मुर्दा रखा फिर उठा खड़ा किया (और फिर) पूछा कि कितनी मुद्दत (इस हाल में) रहा, वह बोला एक दिन या एक दिन का कुछ हिस्सा, फ़रमाया कि तू पूरे सौ साल (इस हाल में) रहा, बस अपने खाने और पानी को देख वह नहीं सड़ा और अपने गधे को देख (किस तरह सड़–गल कर हड्डी चूरा हो गया) और यह इसलिए है ताकि हम तुझे लोगों के लिए निशानी बनाएं और अब (अब) हड्डियों को देखकर किस तरह हम उनको उभार कर जोड़ देते हैं और फिर इस पर गोश्त चढ़ाते हैं, बस जब सबकुछ उसके सामने आ गया तो बोला कि मुझे तो यक़ीन है कि ज़रूर अल्लाह हर चीज़ पर क़ुदरत रखने वाला है।" (सूरह बक़राः 259)

.....(शेष पेज 14 पर)

इस वक़्त मुल्क में एक अंदाज़े के मुताबिक़ तक़रीबन दस हज़ार मुस्लिम नवजवान सलाख़ों के पीछे डाल दिये गये हैं, उनकी अक्सरियत पढ़ी–लिखी है और उनके ज़रिये पूरे ख़ानदान की मआशी ज़रूरतें पूरी हुआ करती थीं। कई वालिदैन हैं जो अपने बच्चों को देखने की हसरत लिए हुए दुनिया से चले गए, कई बीवियां हैं कि सालों साल से उन्होंने ख़ुशी का चेहरा नहीं देखा, कितने ही लड़के और लड़कियां हैं जिनकी मासूम आंखें अपने वालिद के इन्तिज़ार में आंसू बहा रही हैं और घर के ज़िम्मेदार अफ़राद के जेल में चले जाने से वह न सिर्फ़ तालीम व तरबियत से महरूम हैं, बल्कि हलक़ तर करना भी उनके लिए दुश्वार मरहला है। अफ़सोस यह है कि उन गिरफ़्तार नवजवानों में एक बड़ी तादाद उन लोगों की हैं जिन पर अब तक कोई फ़र्दे जुर्म आयद नहीं हुआ है, पुलिस अपने झूठ को सच साबित करने से आजिज़ आ चुकी है, लेकिन क़ानून की तफ़सीलात और अदालत की हिदायतों के बरख़िलाफ़ हुकूमत उन बेकुसूरों को नकरदा गुनाह की सज़ा दे रही है, बज़ाहिर उनका कुसूर सिर्फ़ मुसलमान होना और दीनदार होना है।

यह सूरतेहाल इन्तिहाई तकलीफ़देह, मादरेवतन के दामने इन्साफ़ पर बदनुमा धब्बा, मुल्क की जम्हूरियत और सेक्यूलरिज़्म पर ज़बरदस्त हमला, इन्सानी हुकूक़ के साथ खुला हुआ मज़ाक़ और अख़लाक़ी अक़दार की पामाली है।

इसमें शुब्हा नहीं कि फ़िरक़ा परस्ती का यह ज़हर ज़िन्दगी के तमाम शोबों में ख़ून की तरह शामिल हो रहा है, फिर भी अदलिया का निज़ाम बड़ी हद तक ग़नीमत है और देर से ही सही मज़लूमों को इन्साफ़ मिल जाता है, लेकिन यह इन्साफ़ भी दो पहलुओं से अधूरा है, एक तो इन्साफ़ में हद से गुज़री हुई ताख़ीर, जुर्म व सज़ा के मुक़द्दमात के लिए एक मुद्दत मुक़र्रर होनी चाहिए कि इस मुद्दत के अन्दर–अन्दर पुलिस अपने सुबूत पेश कर दे और मुलज़िम को अपनी सफ़ाई का मौक़ा मिल जाए, क्योंकि इन्साफ़ में देरी ख़ुद एक नाइंसाफ़ी है, अगर किसी शख़्स की उम्र के दस–दस साल सिर्फ़ मामले की तहक़ीक़ में जेल में गुज़र जाएं, तो अक्सर औक़ात पुलिस की अज़ीयत रसानी और ज़हनी तनाव की वजह से ऐसा शख़्स कोई काम करने के लाएक़ नहीं रहता और ज़राए इब्लाग़ की इनायत से वह इस क़द्र बदनाम हो जाता है कि उसे लोग नौकरी देना पसंद नहीं करते। दूसरे ऐसे बेकुसूर लोगों को सिर्फ़ रिहा कर देना काफ़ी नहीं है अदालत को चाहिए कि वह ऐसे लोगों को बेकुसूर गिरफ़्तार रखे जाने का हरजाना अदा करे, उनको अच्छे शहरी होने का सर्टिफ़िकेट दे, उनको उनकी सलाहियत के मुताबिक़ मुलाज़मत मुहैया करे, तब जाकर यह ख़ुद इन्साफ़ के साथ इन्साफ़ होगा वरना तो वह इन्साफ़ अधूरा ही समझा जाएगा जिनमें सालो साल नवजवानों को क़ैद से दो–चार रखा जाए, उनका कैरियर तबाह हो जाए और फिर उन्हें बाइज़्ज़त बरी कर दिया जाए, लेकिन उन्हें एक ऐसे मुस्तक़बिल की तरफ़ धकेल दिया जाए जो एक तारीक सुरंग की तरह हो और उसके आगे कोई रोशनी न हो।

इस सिलसिले में ख़ुद मिल्लते इस्लामिया की क्या ज़िम्मेदारियां हैं? हमें इस पर भी नज़र रखनी चाहिए, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने हमें सिर्फ़ ज़ुल्म से बचने का ही हुक्म नहीं दिया, बल्कि मज़लूमों की मदद करने का भी हुक्म दिया है। सही बुख़ारी में हज़रत बराअ बिन आज़िब (रज़ि0) से मरवी है कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) हमें सात बातों का हुक्म दिया है, उन सात बातों में एक मज़लूम की मदद करना है। लिहाज़ा मुसलमान मुख़्तलिफ़ तरीक़ों पर अपने मज़लूम भाइयों की मदद कर सकते हैं।

1– तमाम मुसलमान मुत्तहिद होकर एक आवाज़ में अपने–अपने इलाक़ों में सियासी नुमाइन्दों पर दबाव डालें और उनसे मांग करें कि उनका वोट इस शर्त के साथ होगा कि वह बेकुसूर नवजवानों को रिहा कराने में मदद करेंगे और पुलिस को उन क़ानूनों का पाबन्द बनाने में अपना किरदार अदा करेंगे जिन्हें क़ानून साज़ों

ने पास किया है या जिनके बारे में अदालतों की हिदायतें मौजूद हैं।

2– जम्हूरी निज़ाम में अवामी एहतिजाज की बड़ी अहमियत है, इसलिए पूरे मुल्क में पुरअम्न एहतिजाज मुनज़्ज़म किया जाए और क़ानून और आईन की हदों में रहते हुए रैलियां निकाली जाएं, सेमिनार मुनज़्ज़म किए जाएं, एहतिजाजी ख़त लिखे जाएं और जो भी कोशिशें हो सकती हैं उनको रूए बअमल लाया जाए।

3– मुख़्तलिफ़ रियासतों की सतह पर भी ऐसे बेकुसूरों के लिए लीगल सेल बनाए जाएं, मुसलमान वकील इस अज़ीम काम के लिए अपनी मुफ़्त ख़िदमत पेश करें, या कम से कम फ़ीस लेने को कुबूल करें, सेक्यूलरिज़्म के हामिल ग़ैरमुस्लिम वकीलों से भी मदद ली जाए, अहले सरवत मुसलमान क़ानूनी चाराजोई के लिए माली तआउन पेश करें, क़ानूनी कोशिशों का हदफ़ सिर्फ़ उनकी रिहाई न हो, बल्कि यह भी हो कि जिन पुलिस वालों ने नवजवानों को फंसाया है, उन्हें सज़ा मिले, और क़ानूनी कार्यवाही को बीच में न छोड़ दिया जाए, बल्कि उसे नतीजे तक पहुंचाया जाए और उसके लिए लगातार जद्दोजहद की जाए।

4– जो लोग क़ैद हैं, उनके परिवार वालों की देख–रेख का माकूल इन्तिज़ाम किया जाए, अगर उनके बच्चे दीनी तालीम हासिल करना चाहते हैं तो दीनी मदरसों में उनके साथ ख़ास रिआयत करें और पूरी किफ़ालत अपने ज़िम्मे लें, अगर वह अस्री तालीम हासिल करना चाहें तो मुस्लिम इन्तिज़ामिया के तहत चलने वाले इदारे उनके लिए मुफ़्त तालीम मुहैया करें, अगर उनकी लड़कियों की शादी का मसला हो तो मुसलमान ताजिरीन आगे बढ़कर उनके लिए ज़रूरी सामान मुहैया करें, ऐसे फ़न्ड क़ायम करें जिनके ज़रिये उनके घरवालों की ज़रूरतें ठीक–ठाक तरह से पूरी हो जाएं, अगर उनके बच्चे बेरोज़गार हैं, तो उनकी सलाहियत के लिहाज़ से उनके लिए रोज़गार फ़राहम करने की कोशिश की जाए, एक ऐसी मिल्लत जो बीस करोड़ लोगों पर मुश्तमिल हो, अगर वह अपनी क़ौम के सितम रसीदा, मज़लूम और मुसलमान होने की वजह से सताए जाने वाले दस हज़ार घरों की किफ़ालत न कर सके तो इससे बढ़कर ग़ैरत की और क्या बात होगी?!

5– इन कामों के लिए मुसलमानों को एक मुनज़्ज़म इदारे की बुनियाद रखनी चाहिए या मुख़्तलिफ़ रियासतों में मुख़्तलिफ़ तन्ज़ीमों को ख़ालिस दीनी और मिल्ली जज़्बे के साथ इस काम का बेड़ा उठाना चाहिए, अफ़सोस है कि हमारा एक मर्ज़ यह हो गया है कि अगर मुसीबत के वक़्त अल्लाह की तौफ़ीक़ से हमसे कुछ काम हो जाता है तो उसके लिए यह झगड़ा उठ खड़ा होता है कि इस काम में किसका कितना हिस्सा है? होना यह चाहिए कि अगर अल्लाह किसी से कुछ काम ले ले तो हम अपनी ख़िदमात को अख़बारों के पन्नों पर मीडिया की स्क्रीन पर रक़म करने के बजाए अल्लाह के रजिस्टर में दर्ज करवाने को तैयार हो जाएं, अगर ऐसा हो तो हम दुनिया में भी एक बाइज़्ज़त क़ौम की तरह जी सकते हैं और आख़िरत में भी अल्लाह की ख़ुशनूदी से हमकिनार हो सकते हैं।

हमें यह याद रखना चाहिए कि साम्प्रदायिक दंगे, धमाके और उन धमाकों के नाम पर बड़ी तादाद में बेकुसूर मुसलमानों की गिरफ़्तारी कोई इत्तिफ़ाक़ी वाक़्या नहीं है बल्कि यह एक मन्सूबाबन्द साज़िश है जिसका मक़सद मुसलमानों की हिम्मत को तोड़ना, उन्हें अकेला व तन्हा कर देना, उन्हें रुस्वा व ख़्वार करना, उनको एक बेअसर एहसासे कमतरी से दोचार' बेहौसला, मक़ावमत के जज़्बे से ख़ाली, शिकस्त की नफ़िसयात से दोचार, ग़रीब व मुफ़लिस, जाहिल व अनपढ़, अपनी तारीख़ पर शर्म सार और अपने दीन से बेज़ार अक़्लियत बनाकर रखना है, अगर हमने इज्तिमाइयत, मोमिनाना फ़रासत, जुर्रत व हिम्मत, ख़तरों का मुक़ाबला करने की हिम्मत, ईमानी भाईचारा, अल्लाह से ताल्लुक़, एक दाई की हैसियत से बिरादराने वतन के साथ हुस्ने सुलूक और जो मौक़ा मिला है, उससे भरपूर फ़ायदे के साथ अपने क़दम आगे नहीं बढ़ाए तो मंज़िल दूर से दूर होती चली जाएगी और हमारी मज़लूमियत की दास्तान भी दराज़ से दराज़ तर होती चली जाएगी, ज़रूरी यह है कि हम अपने चेहरे से ग़फ़लत की चादर उठाएं, शऊर की आंखें खोलें, अज़्म व हौसले को अपना हथियार बनाएं और इज्तिमाइयत का तरीक़ाकार अपनाएं।

हम मुसलमानों से बराबर यह बात कहते रहे हैं कि पहले वह ख़ुद इस्लामी तालीमात पर अमल करना सीखें, कुरआन का भी यही मुतालबा है कि "मुसलमान इस्लाम में पूरे के पूरे दाख़िल हो जाएं और शैतान की पैरवी न करें।" यह तो कोई बात नहीं हुई कि हम ख़ुद तो अमल न करें और उम्मीद यह रखें के दूसरे इस्लाम में गिरोह दर गिरोह दाख़िल हों, ज़ाहिर है कि इस्लाम का नमूना तो हमें ही पेश करना होगा।

हमारे समाज में कैसी–कैसी ख़राबियां पैदा हो गयी हैं। दूसरों की देखा–देखी कैसी–कैसी रस्में और मनचाही तक़रीबें रिवाज पा चुकी हैं, कहा नहीं जा सकता। दूसरे मज़ाहिब में औरतों को विरासत में शरीक नहीं किया जाता तो हमारे समाज में भी उसी का चलन है। दीने मेहर शायद दस–पन्द्रह फ़ीसद लोग अदा करते हों। इस सिलसिले में कोई सर्वे नहीं हो सका है वरना पता चल जाता कि कितने फ़ीसद मुसलमान औरतों को उनका शरई हक़ अदा करते हैं, जो लोग यह हक़ दबाए बैठे हैं वह ख़ूब अच्छी तरह समझ लें कि वह बड़े गुनाह के मुरतकिब हो रहे हैं और उन्हें इसका अज़ाब झेलना पड़ेगा। अगर शरीअत का दिया हुआ हक़ अदा किया जाने लगे तो हमारे समाज में इन्क़िलाब आ जाएगा।

बीस–पच्चीस साल पहले का रिकार्ड उठाकर देख लीजिए, कितने लोग हज को जाते थे, मस्जिदों की तामीर और मुसल्लियों की तादाद क्या हुआ करती थी और आज क्या है? यक़ीनन इसमें काफ़ी इज़ाफ़ा हुआ है, इसकी वजह इसके सिवा कुछ नहीं कि दूसरों को अच्छे या बुरे काम करते देखकर इन्सान मुतास्सिर हो जाता है, हमें चाहिए कि सैयात के बजाए हसनात व ख़ैरात की तरफ़ क़दम बढ़ाएं ताकि हमारे अइज़्ज़ा व अहबाब को भी इसको अपनाने की तौफ़ीक़ हो।

क्या कोई कह सकता है कि मुसलमान नशे वाली चीज़ों का इस्तेमाल नहीं करते? ख़ूब करते हैं, जो कल करते थे वह आज भी कर रहे हैं, सूद के लेन–देन में भी बहुत से लोग गले–गले तक डूबे हुए हैं, तिलक और जहेज़ बिरादराने वतन की धर्म की रौ से दुरुस्त हो सकता है, लेकिन हमारे मज़हब में इसकी कोई अस्ल नहीं है, इस ज़माने में शादी हद से ज़्यादा ख़र्चीली हो रही है, कोरोना के इब्तिदाई दौर में सरकारी पाबन्दियों के सबब निहायत सादगी और किफ़ायत शेआरी के साथ शादियां होने लगी थीं लेकिन जब से सख़्तियों में कमी आयी है, शादियां ख़ूब धूम–धाम से हो रही हैं, ऐसा करने वालों को शायद अंदाज़ा नहीं है कि इस ज़माने में इस्लाम और मुसलमान को किन हालात से गुज़रना पड़ रहा है, कल की बात है कि मुआन्दीने इस्लाम ने किस तरह शरई क़वानीन पर तीशे चलाए, हर्ज़ा सराई की, मज़ाक़ उड़ाया, तलाक़ को ऐब बताया और हव्वा बनाकर खड़ा कर दिया फिर भी हमें ग़ैरत नहीं आयी।

हम अगर जाएज़ा लें तो ख़ुद अपने ख़ानदान में कितने लोग ऐसे निकल आएंगे जिनकी बेटियां घरो में बैठी–बैठी बूढ़ी हो रही होंगी, कितने लोग बीमार होंगे, कितने मआशी तंगी से दोचार होंगे, हमारी ज़रा सी तवज्जो और मदद से उनकी मुश्किलें आसान हो सकती हैं, कितने ज़ीइस्तेदाद मुसलमान आला तालीम हासिल करना चाहते होंगे, मगर माली दुश्वारियों की वजह से आगे न बढ़ पाते होंगे, हमें ऐसे नवजवानों को मिल्लत का सरमाया समझकर हिम्मतअफ़ज़ाई करनी चाहिए, उनकी दिल खोलकर मदद कीजिए, इस क़दम की इंशाअल्लाह तक़लीद की जाएगी।

हर मुसलमान तरजीही बुनियाद पर यह सारे काम करे और जब ऐसा होने लगे तो आप देखेंगे कि समाज में एक नया बदलाव और नई सोच पैदा होगी और आंखे टेढ़ी करने वाले आंखों पर जगह देने वाले बन जाएंगे। हम एक बात और कहना चाहते हैं कि अगर इतना मुफ़ीद नुस्ख़ा हम अब तक इस्तेमाल न कर सके तो क्या ज़रूरी है कि इसके फ़वाएद से आगाह होते हुए अब भी इससे बेपरवाह रहें, हमने अब तक ख़ूब नारे लगाए, जलसे किये, जुलूस निकाले मगर कुछ हाथ नहीं आया, अब ज़रा यह काम भी करके देख लें।

सच और झूठ की तासीरः

"हज़रत हसन बिन अली (रज़ि0) से रिवातय है कि मुझे नबी करीम (स0अ0व0) की यह बात याद है कि आप (स0अ0व0) ने फ़रमायाः जिस चीज़ में तुमको शक हो उसको छोड़ दो और उसको अख़्तियार करो जिसमें तुमको शक न हो, सच्चाई में इत्मिनान है और झूठ में बेइत्मिनानी है।" (सुनन तिरमिज़ीः 2518)

हज़रत हसन (रज़ि0) ने रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की एक हदीस नक़ल की कि जो चीज़ तुम्हारे अन्दर खटक पैदा करती है, उसको छोड़कर वह चीज़ अख़्तियार करो जो चीज़ तुम्हारे सीने में न खटके और तुम बेख़ौफ़ वह बात कुबूल कर सको। यह एक बुनियादी उसूल है कि ग़लती खटकती है और सच हज़म हो जाता है। अच्छी बात आदमी के अन्दर आसानी से उतर जाती है और जो ग़लत बात होती है वह दिल में बहरहाल खटकती है, चाहे वह क़ौल हो या चाहे वह अमल हो। आदमी बहुत सारे ऐसे काम करता है, जो करता तो है लेकिन दिल उस बात पर खटकता रहता है कि ठीक है या नहीं, फिर सोचता है कि कर लेते हैं इसमें क्या हर्ज है, यह जो "क्या हर्ज है" यह आदमी को वहां तक पहुंचा देता है जिसमें हर्ज ही हर्ज है। एक जगह आती है कि आदमी कहता है कि क्या हर्ज है? फिर आदमी वहां पहुंचता है जहां हर्ज ही हर्ज है।

एक बुनियादी उसूलः

ऊपर दी गयी हदीस में रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने एक बुनियादी उसूल दिया है, इसी तरह एक और हदीस में हैः

"अपने दिल से फ़तवा लो।"

(तरग़ीब व तरहीबः 2/557)

यानि अगर तुम लोगों से फ़तवा पूछोगे तो वह फ़तवा दे देंगे, लेकिन ज़रा दिल से भी तो फ़तवा पूछो कि क्या कह रहा है, तुम्हारे दिल में कुछ खटक है या दिल साफ़ है, इस बात के सिलसिले में कोई अमल हो और उस अमल के सिलसिले में अगर तुम्हारा दिल साफ़ है तब तो वह बात ठीक है और अगर तुम्हारे दिल के अन्दर खटक है, तो समझ लो कि इसमें कुछ न कुछ गड़बड़ है।

तहम्मुल रिवायत की शर्तें हैः

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने हज़रत हसन (रज़ि0) के सामने यह बात फ़रमाई थी जो उनको याद रही, जब आप (स0अ0व0) की वफ़ात हुई तब वह छोटे थे, उस वक़्त उनकी उम्र ज़्यादा नहीं थी, मगर ऐसी कम उम्र भी न थी कि हदीसें महफ़ूज़ न कर सकें, तहम्मुले रिवायत की मुहद्दिसीन के यहां जो शर्त है, वह ज़्यादा से ज़्यादा चार साल है, इस उम्र में लोगों को बातें याद रह जाती हैं, इससे कम जो उम्र होती है उसमें आम तौर से बातें याद नहीं रहतीं, लिहाज़ा इससे कम उम्र की बहुत से लोग जो अपनी बातें बतातें हैं वह ऐसे ही उड़ाते हैं, किसी ने कोई ख़्वाब देख लिया और अब तो मोबाइल में लोग इतना देखते हैं कि देखते–देखते लगता है हां वाक़ई में देखा था, तो इसका एतबार नहीं, अलबत्ता चार साल की उम्र में बातें याद रहती हैं। हज़रत हसन (रज़ि0) ने जिस वक़्त यह रिवायत सुनी थी तो ख़ासे बड़े थे, उन्होंने रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से बहुत सी हदीसें सुनी थीं, उन्हीं में एक हदीस यह भी है जो एक उसूली बात है कि जो चीज़ तुम्हें खटक रही हो उसे छोड़ दो और जो चीज़ बेखटक हो, तुम्हारे दिल में उसके मुताल्लिक़ ज़रा भी गुबार न पैदा हो रहा हो, उसको अख़्तियार कर लो।

ग़ैर दीनी मिज़ाजः

वाक़्या यह है कि यह एक ऐसा उसूल है अगर आदमी इसको अख़्तियार कर ले तो बहुत सी ग़लत बातों से बच सकता है, वरना आदमी तावीलें करता है और अब तो हाल यह है कि आदमी अपने फ़ायदे के लिए अगर एक दारुल इफ़्ता में मतलब का फ़तवा न मिले तो दूसरे दारुल इफ़्ता जाता है, वहां न मिले तो तीसरी जगह जाता है, गोया उसके सामने शरीअत

ज़्यादा नहीं है, बल्कि उसको अपने मतलब की बात चाहिए। यह ग़ैर दीनी और ग़ैर शरई बात है और यह दीनी मिज़ाज से बिल्कुल हटी हुई बात है। जब एक मर्तबा तुम्हें शरीअत की बात बता दी गयी तो उसको मान लो, तुम दस जगह तो उसी के लिए जाते हो ताकि तुम्हारे मतलब की बात मिले, इसमें लोग यह करते हैं कि जो इस्तिफ़ता तैयार करते हैं उसमें हेर–फेर करते हैं, हालांकि सवाल का जवाब तो वही होगा जो तुम सवाल करोगे, अब तुम्हारा जैसा सवाल होगा वैसा ही जवाब होगा, लिहाज़ा उसको लेकर तुम मुतमईन हो गये तो यह जो सवाल बदल–बदल कर तुम फ़तवा पूछ रहे हो, यह इसीलिए है ताकि तुम्हारा जवाब बदल जाए, गोया तुम्हारे दिल में मैल है।

आज हम लोगों का यह जो मिज़ाज है कि दीन को अपने ताबए बनाया जाए, अपनी ज़रूरत के ताबए बनाया जाए, यह मिज़ाज बहुत ही ख़तरनाक है, होना तो यह चाहिए कि अपने मिज़ाज को दीन के ताबए बनाया जाए, अपनी ज़रूरतों को दबाया जाए, अपने मफ़ादात को पीछे किया जाए, दीन के तक़ाज़ों को आगे बढ़ाया जाए।

क़ल्बे सलीम की ज़रुरतः

किसी अमल के मुताल्लिक़ जब दिल में खटक होती है, वह खटक तभी होती है जब आदमी उल्टे–सीधे काम करता है, जब सीधा चलता है तो खटक ही नहीं होती, लिहाज़ा दिल साफ़ होना चाहिए और आदमी को हर वह चीज़ें अख़्तियार करना चाहिए जो सीधी–सीधी दीन की बातें हैं और जो उसके नज़दीक मोतबर आलिम हो, जिसके साथ वह वक़्त गुज़ार चुका हो, जिसको जानता हो कि वह सच्चा आलिम है, अमानतदार है, अगर दिल में कोई बात खटक रही है और समझ रहा है कि सही है या ग़लत तो उससे पूछ ले, वरना जब तक न पूछे और खटक रहे तो हरगिज़ न करे, इसलिए कि जब खटक होगी तो आदमी चक्कर में पड़ेगा।

सच और झूठ का फ़र्क़ः

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

"बिला शुब्हा सच्चाई में इत्मिनान है और झूठ में बेइत्मिनानी है।"

यह हक़ीक़त है कि सच बोलने वाला हमेशा मुतमईन रहता है, इसलिए कि वह जानता है कि कहीं फसेंगे नहीं और झूठ बोलने वाला हमेशा शुब्हे में रहता है। अव्वल तो अपनी ज़ात के एतबार से शुब्हे में रहता है कि हमने यह ग़लत किया या सही किया, कुछ पता नहीं, दूसरे वह अन्दर के एक उधेड़बुन में रहता है कि मैंने फ़लां मौक़े पर फ़लां बात कह दी थी, कहीं मैं पकड़ा न जाऊं, मैंने वह बात ग़लत कही थी, इसलिए आदमी झूठ से हमेशा परेशानी में रहता है और जो हमेशा, हर जगह सच बोलता है वह कभी परेशानी में नहीं पड़ता, बड़े इत्मिनान में रहता है तो सच्चाई ख़ुद इत्मिनान है और झूठ ख़ुद तरद्दुद है। ज़ाहिर है कि झूठ में जो बात कही गयी वह ख़िलाफ़े वाक़्या कही गयी, इसमें ख़ुद ब ख़ुद तरद्दुद पैदा होगा कि अब कभी आइन्दा कोई बात पेश आएगी तो इसकी तहक़ीक़ होगी और मैं फंस जाऊंगा इसलिए कि जब तहक़ीक़ होगी तो बात ख़िलाफ़े वाक़्या सामने आएगी, लिहाज़ा यह ख़ुद एक तरद्दुद है। सच्ची बात यह है कि हर वह अमल जो शरीअत के ख़िलाफ़ हो, वह दिल में खटक पैदा करता ही है और झूठ तो बहुत बड़ा गुनाह है, आदमी अगर झूठ बोलेगा तो दिल के अन्दर मैल पैदा ही होगा और खटक पैदा ही होगी, इसलिए कि शरीअत पर अमल करने में इत्मिनान है और अमल न करने में तरद्दुद और खटक है, लिहाज़ा अगर किसी शख़्स की ज़िन्दगी में परेशानी है तो आदमी अपनी पूरी ज़िन्दगी को देखे और उसका जाएज़ा ले।

हासिल बहस

सच्चाई दीन की एक अहम बुनियादों में से है। सच्चाई है तो दीन की पूरी इमारत सही क़ायम है और अगर सच्चाई नहीं है तो इन्सान कहां जाकर फंस जाए और दीन की दीन की इमारत कहां जाकर ढह जाए कुछ पता नहीं, इसलिए हमेशा इसका ख़्याल रखना चाहिए, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने सच्चाई के बारे में फ़रमाया कि इससे इत्मिनान हासिल होता है और झूठ के बारे में फ़रमाया कि यह शक व शुब्हे की चीज़ है और दिल में खटक पैदा करने वाली चीज़ है।

निकाह के चन्द मसाएल (4)

मुफ्ती राशिद हुसैन नदवी

निकाह सही होने की शर्तें:

पहली शर्त: निकाह की पहली शर्त यह है कि अक़्द करने वाला आक़िल–बालिग़ हो, अगर पागल और नासमझ बच्चा निकाह करे तो सिरे से मुनअक़िद ही नहीं होगा और अगर समझदार बच्चा अपना निकाह कर ले तो वली की इजाज़त पर मौक़ूफ़ होगा।

(हिन्दियाः 1/276, बदाएः 2/490)

दूसरी शर्त: जिस औरत से निकाह करना है, वह उन महरम औरतों में से न हो जिसका बयान बाद में आएगा। (हिन्दियाः 1/267)

तीसरी शर्त: आक़िदीन में से हर एक का इसालतन या वकालतन दूसरे का कलाम सुनना।

चौथी शर्त: गवाहों के साथ निकाह होना।

मुसलमान मर्द का जब मुसलमान औरत से निकाह हो रहा हो तो गवाह में मुन्दरजा ज़ेल चीज़ों का पाया जाना ज़रूरी है:

1. दो मर्द या एक मर्द और दो औरतों को गवाह बनाया जाए।
2. यह गवाह मुसलमान हों।
3. आज़ाद हों (मौजूदा दौर में इस शर्त की कोई ज़रूरत नहीं है, इसलिए कि सब आज़ाद होते हैं)
4. ग़वाह आक़िल हों मजनून की गवाही से निकाह मुनअक़िद नहीं होगा।
5. बालिग़ हों, नाबालिग़ की गवाही से निकाह मुनअक़िद नहीं होगा।

(हिन्दियाः 1/267, शामीः 2/295 वमाबाद)

कौन गवाह बन सकता है?

जिसके अन्दर ऊपर बयान की गयी शर्तें पायी जाएं, वह गवाह बन सकता है। चाहे रिश्तेदार हो या अजनबी और चाहे उसका ताल्लुक़ लड़के से हो या लड़की से, जो लोग लड़की से इजाज़त के वक़्त गवाह बनाए जाते हैं, यह ज़रूरी नहीं कि अक़्द के वक़्त भी वही लोग गवाह बनाए जाएं, दूसरे गवाह भी बनाए जा सकते हैं, बल्कि जितने लोग भी महफ़िले निकाह में मौजूद हों अगर उन्होंने ईजाब व कुबूल सुना है तो शरअन सब गवाह हैं। (मसादिरे मज़कूरा)

तन्हा औरत की गवाही:

तन्हा औरत की गवाही से शरअन निकाह मुनअक़िद नहीं होता, ख़्वाह उनकी तादाद चार या उससे ज़्यादा ही क्यों न हो, गवाही में एक मर्द का होना लाज़मी है। (मसादिरे मज़कूरा)

फ़ासिक़ वग़ैरह की गवाही:

बेहतर यह है कि आदिल दीनदार शख़्स को गवाह बनाया जाए, ताकि अगर निकाह के मुताल्लिक़ इख़्तिलाफ़ हो जाए तो उनकी गवाही कज़ा में पेश की जा सके लेकिन अगर किसी वजह से फ़ासिक़ को गवाह बना दिया या नाबीना को गवाह बना दिया तो शरअन निकाह मुनअक़िद हो जाएगा, अगरचे इख़्तिलाफ़ की सूरत में कज़ा में उनकी गवाही मोतबर नहीं होगी। (हिन्दियाः 1/267, शामीः 2/297)

काफ़िरों के निकाह में गवाही:

काफ़िर अगर आपस में निकाह करें तो उनके निकाह के गवाह में मुसलमान होना शर्त नहीं है। इसी तरह अगर कोई मुसलमान किसी ईसाई या यहूदी औरत से निकाह करे तो गवाहों का मुसलमान होना शर्त नहीं है, अगर किसी ईसाई और यहूदी को गवाह बना लिया तब भी निकाह हो जाएगा।

(हिन्दियाः 1/267)

गवाहों का एक साथ ईजाब व कुबूल सुनना:

एक शर्त यह भी है कि गवाह एक साथ ईजाब व कुबूल सुनें, चुनान्चे अगर एक गवाह ने ईजाब व कुबूल सुना, फिर वह चला गया, फिर दूसरे गवाह की मौजूदगी में ईजाब व कुबूल किया गया या एक गवाह ने ईजाब सुना और दूसरे ने कुबूल सुना, तो निकाह सही नहीं होगा। (हिन्दियाः 2/296)

निकाह की पांचवी शर्त:

इन शर्तों में से एक शर्त यह भी है कि ईजाब व कुबूल एक ही मजलिस में हो। इसलिए अगर ईजाब

अलग मजलिस में हो और कुबूल अलग मजलिस में हो तो निकाह मुनअक़िद नहीं होगा, मसलनः एक ने दूसरे की मौजूदगी में ईजाब किया और दूसरे ने उस वक़्त कुबूल करने के बजाए मजलिस बदलने के बाद कुबूल किया तो निकाह सही नहीं होगा, इसी तरह अगर एक ने दूसरे की ग़ैर मौजूदगी में गवाहों की मौजूदगी में ईजाब किया और दूसरे को जब इसकी इत्तेला दी गयी तो उसने कुबूल कर लिया, तब भी निकाह सही नहीं होगा, ख़्वाह उन्ही दोनों गवाहों की मौजूदगी में कुबूल करे। (हिन्दियाः 1/269, शामीः 2/289)

छठी शर्तः अगर औरत बालिग़ है तो निकाह से उसका रज़ामन्द होना शर्त है, बालिग़ा की रज़ामन्दी के बग़ैर वली उसका जबरी निकाह कराए तो मुनअक़िद नहीं होगा। (हिन्दियाः 1/269)

सातवीं शर्तः यह है कि ईजाब व कुबूल में मुवाफ़क़त हो, चुनान्चे अगर कहा जाए कि मैंने तुम्हारा निकाह फ़लाना बिन्त फ़लां से एक सौ ग्राम चांदी पर किया और शौहर कहेः मैंने निकाह कुबूल किया मेहर कुबूल नहीं है, तो निकाह नहीं होगा, उसके बरख़िलाफ़ अगर निकाह कुबूल कर लेता है और मेहर पर सुकूत अख़्तियार करता तो निकाह हो जाता।

(हिन्दियाः 1/269, शामीः 2/289)

आठवीं शर्तः यह है कि लड़का और लड़की मालूम हों, इसलिए अगर किसी शख़्स की दो बेटियां थीं और वह सिर्फ़ यह कहे कि मैंने अपनी बेटी का निकाह तुमसे कर दिया और जिस बेटी का निकाह कराया उसका तअय्युन न करे तो निकाह सही नहीं होगा।

(हिन्दियाः 1/27)

फ़ोन और जदीद ज़राए इब्लाग़ (मीडियम) पर ईजाब व कुबूलः

निकाह की शर्तों में से एक शर्त यह भी है कि ईजाब व कुबूल एक ही मजलिस में हो (देखिए पांचवी शर्त) लिहाज़ा फ़ोन या जदीद ज़राए इब्लाग़ जैसेः इन्टरनेट, वेबसाइट, फ़ैक्स और टेलीग्राम वग़ैरह के ज़रिये अगर एक ईजाब और दूसरा कुबूल करे तो निकाह मुनअक़िद नहीं होगा, इसलिए कि दोनों की मजलिसें अगल–अलग होती हैं, अलबत्ता जो शख़्स मौजूद नहीं है वह किसी को वह किसी को अपने निकाह का वकील बना दे, जैसेः उससे कहे, ''तुम मेरा निकाह फ़लाना से करा दो, या मैं तुमको फ़लाना से निकाह कराने का वकील बनाता हूं वग़ैरह'' और वकील दो गवाहों की मौजूदगी में अपने मुवक्किल की तरफ़ से ईजाब करे और दूसरा फ़रीक़ उसे कुबूल करे तो निकाह हो जाएगा। वकील चाहे फ़ोन को ज़रिया बनाए या उन ज़राए इब्लाग़ में से किसी को ज़रिया बनाए, चाहे अपने अज़ीज़ व अक़ारिब में से किसी को बनाए या किसी अजनबी को।

(किताबुल फ़तावाः 4/304–306)

वह औरतें जिनसे निकाह करना हराम हैः

जिन औरतों से निकाह करना हराम है, उनकी पूरी तफ़्सील कुरआन मजीद में बयान की गयी है, फ़ुक़्हा ने उसी की रोशनी में मसाएल को बयान फ़रमाया है, इसलिए पहले इन आयात का तर्जुमा मुलाहिज़ा फ़रमाएं:

"और तुम्हारे बाप जिन औरतों से निकाह कर चुके हों, तुम उनसे निकाह न करना, सिवाए उसके जो पहले हो चुका, यक़ीनन यह बड़ी बेहयाई और सख़्त नाराज़गी का काम है और बदतर रास्ता है, तुम पर हराम की गईं हैं तुम्हारी माएं और तुम्हारी बेटियां और तुम्हारी बहनें और तुम्हारी फूफियां और तुम्हारी ख़ालाएं और तुम्हारी भतीजियां और भांजियां और तुम्हारी वह माएं जिन्होंने तुम्हें दूध पिलाया और तुम्हारी दूध शरीक बहनें और तुम्हारी बीवियों की माएं और तुम्हारे ज़ेरे तरबियत तुम्हारी सौतेली बेटियां जो तुम्हारी उन बीवियों से हों जिनसे तुमने सोहबत की है और अगर तुमने उनसे सोहबत न की हो तो तुम पर कोई गुनाह नहीं और तुम्हारे उन बेटों की बीवियां जो तुम्हारी पुश्त से हैं और यह कि तुम दो बहनों को जमा करो, सिवाए उसके जो हो चुका (तो हो चुका) बिला शुब्हा अल्लाह बहुत मग़्फ़िरत फ़रमाने वाला निहायत रहम करने वाला है और वह औरतें भी (तुम पर हराम की गयीं) जो दूसरों के निकाह में हों सिवाए उनके जिनके तुम मालिक हुए, यह तुम पर अल्लाह का तय शुदा हुक्म है, उनके अलावा (औरतें) तुम्हारे लिए हलाल की गईं कि तुम अपने मालों के बदले (निकाह में लाना) चाहो, निकाह का रिश्ता क़ायम करने के लिए, मस्ती के लिए नहीं।" (सूरह निसाः 22–24)

हुरमते निकाह के असबाबः

इस आयते करीमा और बाज़ दूसरी आयतों और हदीसों के पेशेनज़र फ़ुक़्हा ने हुरमते निकाह के कुछ असबाब तहरीर फ़रमाएं हैं, जो नीचे ज़िक्र किये जाते हैंः

1. नस्बी क़राबत की बुनियाद पर हुरमत
2. मसाहिरत (यानि निकाह के रिश्ते से वजूद मे आने वाली क़राबतों) की बुनियाद पर हुरमत
3. रज़ाअत (यानि बचपन में दूध पीने की वजह से) हुरमत
4. जमा की बुनियाद पर हुरमत, जैसे दो बहनों को एक साथ निकाह में रखना या ऐसी दो औरतों को एक साथ निकाह में रखना जो बाहम दूसरे की ज़ोरहम महरम हों
5. दूसरे के निकाह या इद्दत में होने की वजह से हुरमत
6. ज़ौजेन में से किसी के मुश्रिक होने की वजह से हुरमत
7. तीन तलाक़ देने की वजह से हुरमत

ग़ुलाम और बांदी से ताल्लुक़ रखने वाले असबाब। नीज़ उन असबाब का ज़िक्र क़सदन छोड़ दिया गया जिनकी कभी ज़रूरत नहीं पड़ती।

(शामीः 2/300)

नस्बी क़राबत की बुनियाद पर हुरमतः

नस्बी क़राबत की बुनियाद पर मुन्दरजा ज़ेल औरतें हराम हैंः

1. मां–दादी–नानी ऊपर तक (यानि उसूल)
2. फ़ुरूअः लड़की–पोती–नवासी नीचे तक
3. बहन ख़्वाह सगी हो या बाप शरीक हो या मां शरीक
4. भतीजी और भांजी नीचे तक

फूफी और ख़ाला और अपने मां–बाप की फूफी और ख़ाला, ख़्वाह यह हक़ीक़ी फूफी या ख़ाला हों, ख़्वाह बाप शरीक फूफी और ख़ाला हों या मां शरीक फूफी और ख़ाला हों। ख़्याल रहे कि इस तबक़े में हुरमत सिर्फ़ फूफी और ख़ाला तक महदूद रहती है, फूफी, ख़ाला नीज़ चचा की लड़कियों से निकाह जाएज़ है।

(हिन्दियाः 1/273, शामीः 2/300–301)

शेषः ज़रिए की हैसियत और ख़ुदा का फ़ैसला

इस वाक़्ये से साफ़ पता चलता है कि सारी ख़ासियतें अल्लाह ही की पैदा की हुई हैं, हर चीज़ की ख़ासियत उसी की बनाई हुई है और वही ख़ासियतें उसमें चल रही हैं, मगर अल्लाह इस बात पर पूरी तरह क़ादिर है कि वह जहां चाहे उस ख़ासियत को रोक दे जिसकी बहुत सी वजहें हो सकती हैं। कभी–कभी अल्लाह तआला आदमी की नेकी और उसके सलाह की वजह से नुक़सान से बचाने के लिए बहुत सी चीज़ों की ख़ासियत ख़त्म कर देता है या ज़ाहिरी ज़राए के निज़ाम में तब्दीली कर देता है, जैसेः अगर किसी शख़्स का कोई नेक अमल पसंद आ गया तो आख़िरत में सवाब देने के अलावा वह दुनिया में भी उसके साथ ख़ास फ़ज़्ल का मामला करता है, लिहाज़ा अगर उसके ऊपर कोई मुसीबत आने वाली होती है तो उसको टाल देता है और मुसीबत से बचाकर आफ़ियत व सलामती अता फ़रमाता है।

इससे एक बात और समझ में आती है कि अगर इन्सान मुसीबतों का शिकार हो रहा है तो इसका मतलब यह है कि कहीं न कहीं उससे कोई ऐसी ग़लती या कोताही हो रही है जिसकी वजह से मुसीबत आ रही है, कुरआन मजीद में भी इसका ज़िक्र है, इरशादे इलाही हैः

"और तुम जिस मुसीबत से भी दो–चार होते हो वह तुम्हारे हाथों की कमाई है और कितनी चीज़ें वह दरगुज़र कर जाता है।"

आयत से पता चलता है कि जो मुसीबतें आती हैं वह बदआमालियों की नहूसत होती हैं जो मुसीबत की शक्ल में आती हैं, लेकिन हम यह समझते हैं कि किसी ज़ाहिरी वजह से हम उस मुसीबत का शिकार हुए हैं और अपनी बदआमालियों पर निगाह नहीं डालते। इसी तरह जब कोई फ़ायदा या नेमत हासिल होती है तो यह सोचते हैं कि इसको हमने अपनी तदबीर और अक़्ल की बुनियाद पर हासिल किया है, इसमें किसी का कोई एहसान नहीं है, हालांकि इन्सान की अक़्ल या तदबीर उसी वक़्त कारगर हो सकती है, जब अल्लाह तआला की तरफ़ से इजाज़त हो, वरना सब कोशिशों के बावजूद भी अक़्ल हैरान रह जाती है और तदाबीर बातिल हो जाती हैं।

जो लोग कामचोर होते हैं, जद्दोजहद का मिज़ाज नहीं रखते, ज़िम्मेदारी से भागना चाहते हैं, वह हक़ीक़त में आयतों को छुपाते हैं, ताकि उनपर कोई इल्ज़ाम न आए, मुनाफ़िक़त के साथ आराम की ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए उनको वजहे जवाज़ भी मिले। यहूदी जद्दोजहद करने वाली क़ौम नहीं थे, इसलिए ज़िम्मेदारी से बचने के लिए आयतों को छुपाने को पूरा दरवाज़ा उन्होंने खोल लिया था, मज़ीद हासिद भी थे, अगर तौरेत की आयतों से किसी क़ौम की फ़ज़ीलत मालूम होती तो उस क़ौम को गिराने के लिए उन्होंने यह मज़मूम तरीक़ा ईजाद किया था कि आयतों को छिपा–छिपा कर अपनी दीनी चौधराहट को बरक़रार रखा जाए, अपने सिलसिले के अम्बिया के अलावा वह किसी और नबी की फ़ज़ीलत उनको गवारा नहीं थी, बल्कि ख़ुद अपने अम्बिया का कोई साफ़–शफ़्फ़ाफ़ अमल उनकी नफ़्सानियत की गन्दगी का साथ नहीं तो उनसे मुताल्लिक़ भी आयतों को छिपाने या बदलने की कोशिशें करते। ख़ासकर रसूलुल्लाह (स0अ0व0) और उम्मते मुस्लिमा के ताल्लुक़ से उन्होंने हद ही कर डाली। उन तमाम आयतों को पहले छिपाया, फिर मिटाया जो रसूलुल्लाह (स0अ0व0) और आपके असहाब के बारे में थीं। ज़बीहुल्लाह जो हक़ीक़त में हज़रत इस्माईल (अलैहिस्सलाम) थे, उनसे यह फ़ज़ीलत छीनकर अपने अपने जद्दे अमजद हज़रत इस्हाक़ को दी। जिन हुक्मों पर अमल करना दुश्वार होता उन आयतों को छिपाने में उनको कोई आर नहीं था। ख़ुद उनके उलमा ने तौरेत की शरह के नाम पर जो तलमूद तैयार की है वह तहरीफ़ व कितमान बल्कि तग़्लीते आयात का एक अजूबा है, मज़ीद उसे दीनी रंग देने के लिए यह बोहतान भी अपने सर लिया कि तौरेत की जो तश्रीह उनके मन में आएगी वह करेंगे और वही मन्शा–ए–इलाही क़रार पाएगी, भले उससे तौरेत की खुल्लमखुल्ला नफ़रमानी लाज़िम आए। कित्मान, बोहतान, तहरीफ़, तरमीम, हज़फ़ व इज़ाफ़ा और पता नहीं क्या कुछ, अल्लाह की किताब तौरेत के साथ यहूदियों ने ऐसा बदतरीन जुल्म किया। मगर अफ़सोस की बात है फिर भी वह अपने आप को अल्लाह के लाडले कहते रहे, उनकी पूरी तारीख़ ''फ़ज़्ज़लतुकुम अलल आलमीन'' से शुरू होकर ''जुरिबत अलैहिमुज़्ज़िल्लतु व मस्कनतु'' पर ख़त्म होती है। कुरआन मजीद में बहुत सी जगहों पर उनके जुर्म बयान किये गए हैं, एक जगह है:

"यक़ीनन वह लोग जो हमारी उतारी हुई खुली निशानियों को और हिदायत को छिपाते हैं बावजूद यह कि हमने उसको लोगों के लिए किताब में साफ़–साफ़ बयान कर दिया है, यही वह लोग हैं अल्लाह जिन पर लानत करता है और लानत करने वाले उन पर लानत करते हैं।" (सूरह बक़राः 159)

ज़रूरत के वक़्त किसी चीज़ को छिपाने का ''कित्मान'' है। छिपाने वाले यहूद थे, यहूद ने बहुत कुछ छिपाया, वह ख़ूब जानते थे कि अगर उनके औसाफ़ को ज़ाहिर किया गया तो ख़ुद उनके लिहाज़ से रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की हक़्क़ानियत ज़ाहिर हो जाएगी और पूरी क़ौम के लिए ईमान लाना ज़रूरी हो जाएगा, वरना सबकी निगाहों से गिर जाएंगे, इसका इलाज उन्होंने यह सोचा कि उन आयतों ही को छिपाया जाए जिनसे रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की हक़्क़ानियत ज़ाहिर होती है। इस तरह इन्सानों में झूठी इज़्ज़त पाने के लिए अल्लाह की नज़रों से गिरना गवारा कर लिया, यह इन्तिहा दर्जा हैरत अंगेज़ बात थी जिनको ख़ुसूसी तौर पर "उसको सबसे पहले झुठलाने वाले न बनो" कहा गया था, उन्होंने ही बढ़चढ़ कर झुठलाया, अल्लाह की आयतों से खिलवाड़ किया और झूठी इज़्ज़त की तलाश में हमेशा की लानत का तौक़ पहन लिया।

आयत में ''फ़िल किताब'' से मुराद तौरेत है, वह

अल्लाह की किताब थी, लोगों के लिए उतरी थी। उन बदबातिनों ने आयतों को छिपाकर अल्लाह की किताब की हिदायत से अल्लाह के बन्दों को रोका, यह दोहरे मुजरिम थे, कित्माने आयात के और सदअन सबीलुल्लाह के, अल्लाह की आयतों को छिपाने के नतीजे में अल्लाह की लानत के मुस्तहिक़ बने और हर–हर लानत करने वालों की लानत के मुस्तहिक़ हुए। लानत का मतलब धुत्कार कर दूर करने का है। अल्लाह की लानत का मतलब है कि अल्लाह उनसे बेज़ार और वह अल्लाह के सवाब और उसकी मुहब्बत से महरूम हैं।

एक और जगह इस आयत की मज़ीद तश्रीह है, अल्लाह की तरफ़ से अहले किताब को यह हुक्म था कि तमाम लोगों के सामने किताब खोल कर रखें:

"वह वक़्त क़ाबिले ज़िक्र है जब अल्लाह ने अहले किताब से वादा लिया था कि वह ज़रूर किताब को लोगों के सामने ख़ूब बयान करेंगे और उसे क़तअन नहीं छिपाएंगे, लेकिन उन्होंने उस वादे को पीठ पीछे डाल दिया और एक हक़ीर क़ीमत के एवज़ उस वादे को बेच दिया, कितनी बुरी चीज़ है जिसे वह ख़रीदे जा रहे हैं।"

इस अहद का ज़िक्र मौजूदा बदली हुई तौरेत में भी चला आ रहा है: "मैं तुम्हें जो हुक्म देता हूं उसमें न तो कुछ इज़ाफ़ा करना और न उसमें से कुछ घटाना, बल्कि ख़ुदावन्द! तुम्हारे ख़ुदा के जो हुक्म हैं तुम्हें दे रहा हूं, उनके पाबन्द रहना।" (इस्तिस्ना: 2/4)

"तुम यह बातें अपनी औलाद और उनके बाद उनकी औलाद को सिखाओ।" (इस्तिस्ना: 9/49)

"यह एहकाम जो आज मैं तुम्हें दे रहा हूं, तुम्हारे दिल पर नक़्श हों, तुम उन्हें अपनी औलाद के ज़हन नशीन करो, जब तुम घर में बैठे हो या राह चलते हो या लेटे हो या जब उठो तो उनका ज़िक्र करते रहा करो।" (इस्तिस्ना: 8/6)

"मेरे इन अल्फ़ाज़ को अपने दिल व दिमाग़ पर नक़्श कर लो और निशान के तौर पर उन्हें अपने हाथों पर बांध लो और अपनी पेशानियों पर टीकों की तरह लगा लो, जब तुम घर में बैठे हो और तुम राह पर चलते हो और जब तुम लेटे हो और जब तुम उठो तो उनका ज़िक्र करते हुए उन्हें अपने बच्चों का सिखाओ।" (इस्तिस्ना: 11/19–20)

"लेकिन अगर मेरी न सुनोगे और उन सब एहकाम पर अमल न करोगे और मेरी शरीअत को मुस्तरद कर दोगे और मेरे क़वानीन से नफ़रत करोगे, मेरे एहकाम की तामील में नाकाम रहोगे और यूं मेरे अहद की ख़िलाफ़वर्ज़ी करोगे तो मैं तुम्हारे साथ इस तरह पेश आऊंगा कि नागहानी दहशत, घुलाने वाली बीमारियां और बुख़ार तुममें भेज दूंगा जो तुम्हारी बीनाई को तबाह करेंगे और तुम्हारी जान ले लेंगे।"

(अहबार: 26/15–16)

यहूद के ताल्लुक़ से ख़ुद उनकी किताब की तस्रीहात आपने मुलाहिज़ा कीं, इसके अलावा ऊपर बयान की गई कुरआनी आयात में हुक्मे आम है, लिहाज़ा जो भी वक़्ते ज़रूरत सही बात नहीं बताएगा, वह उस आयत की वईद में शामिल होगा। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) का इरशाद है:

"किसी से किसी इल्म के बारे में पूछा जाए और उसे वह छिपाए तो क़यामत के दिन (उसके मुंह पर) आग की लगाम कस दी जाएगी।" (अबूदाऊद: 3658)

आग की यह लगाम मुंह पर इसलिए कस दी जाएगी कि जो मुंह अल्लाह के इल्म के लिए खुल न सका, उसके लिए आग की लगाम ही मुनासिब है। अलबत्ता यह बात वाज़ेह रहे कि लोगों के सामने दक़ीक़ बातें पेश करना जिनकी उनको ज़रूरत नहीं, बल्कि उन बातों से उल्टे उनके ज़हन में ग़लत–सलत शक–शुब्हा पैदा हो, यह बिल्कुल सही नही है, इन बातों को ज़ाहिर न करना कित्माने इल्म में शामिल नहीं, इसलिए कि अल्लाह तआला ने मज़कूरा आयत में ''अलबैय्यनात वल हुदा'' को वाज़ेह करने का हुक्म दिया है, इसीलिए हज़रत अली (रज़ि0) फ़रमाते थे:

"लोगों से उनकी अक़्ली सतह को देखकर बात करो, क्या तुम यह चाहते हो कि अल्लाह व रसूल को झुठलाया जाए।"

हज़रत मौलाना अली मियाँ नदवी (रह०)

मज़ाके़ शेर व सुख़न

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

"अच्छा और बड़ा आदमी बजाए खुद अच्छा शेर होता है।" (प्रोफ़ेसर रशीद अहमद सिद्दीक़ी रह0)

मुफ़क्किर–ए–इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली नदवी (रह0) की मज़ाक़ शेर व सुख़न की दौलत मौरूसी थी। उनके वालिद माजिद हकीम सैय्यद अब्दुल हयि हसनी एक कामयाब मुअर्रिख़ होने के साथ बाज़ौक़ अदीब भी थे, जिन्हें बएकवक़्त अरबी व उर्दू दोनों ज़बानों में उबूर हासिल था। इसी तरह हज़रत मौलाना ही के ख़ानदान के एक बुज़ुर्ग मौलाना सैय्यद अबुल ख़ैर बर्क़ साहब भी ज़बान व अदब की लताफ़त और उसके बांकपन से बहरावर थे। खुद भी शेर कहते थे और अच्छे कहते थे नीज़ आपके उम्मे मोहतरम मौलाना सैय्यत तलहा हसनी और मामूज़ाद भाई हाफ़िज़ सैय्यद हबीबुर्रहमान साहब भी उर्दू अदब का अच्छा ज़ौक़ रखते थे। अलावा अज़ीं हज़रत मौलाना के ख़ानदान में दस्तूर था कि तक़रीबन रोज़ाना घर की ख़्वातीन अपने बच्चों को लेकर एक जगह जमा होतीं और कोई न कोई मंजूम कलामे वज्द के साथ पढ़कर महफ़िल में मौजूद सबको महफ़ूज़ करतीं। ख़ासकर समसामुल इस्लाम या मुसद्दस हाली वग़ैरह पढ़ी जाती, जिसमें पढ़ने वालियों की आवाज़ गुलूगीर हो जाती और सुनने वालों के आंसूओं की झड़ी लग जाती। इस पर मुस्तज़ाद यह कि हज़रत मौलाना (रह0) का अहदे तुफ़ूलत ख़ालिस इल्म दोस्त व अदब नवाज़ था जिसमें शेरगोई और शेरफ़हमी पढ़े–लिखे होने की अलामत समझी जाती थी। उस ज़माने में इस्माईल मेरठी और मौलाना ज़फ़र अली ख़ां का मजमूआ–ए–कलाम शुरफ़ा के घरों की ज़ीनत थी। हज़रत मौलाना ने इन मजमूओं को बारहा पढ़ा और सुना। जिसके गहरे नुकूश लौहे दिल पर मुरतसिम हुए थे। हज़रत मौलाना एक जगह लिखते हैं:

"इस मजमूए के मज़ामीन नज़्म व नस्र के बार–बार पढ़ने से हम लोगों के अन्दर अच्छी इबारत और अच्छे शेर का लुत्फ़ लेने की सलाहियत पैदा हुई।"

(पुराने चराग़: 2/306)

हज़रत मौलाना के मज़ाक शेर व सुख़न को जिला बख़्शने में मुहम्मद हुसैन आज़ाद की किताब आबे हयात का बड़ा किरदार है। जिसके बारहा मुताले से अशख़ास शोअरा और उनका कलाम दिमाग़ पर नक़्श हो गया। इसके अलावा आपके वालिद माजिद की शहर आफ़ाक़ तस्नीफ़ गुले राना तो घर की तस्नीफ़ थी। इसके बारे में हज़रत मौलाना (रह0) का खुद यह बयान है:

"गुले राना घर की किताब थी, उसको इतने बार पढ़ा कि उर्दू शायरी की तारीख़ और शायरों के मुताल्लिक इतनी मालूमात हो गयी कि इस मौज़ू पर मजलिस में बात करने और बातचीत में हिस्सा लेने की इस्तेअदाद पैदा हो गयी।" (कारवान–ए–ज़िन्दगी: 1/49)

हज़रत मौलाना की नशो नुमा अदबी माहौल में हुई जिसका तबई असर यह हुआ कि आपका दिमाग़ी सांचा अदब आफ़रीनी, अदब आमोज़ी और अदब परवरी का ख़ज़ीना बन गया और उसका फ़ितरी नतीजा यह हुआ कि आपके ज़हने रसां ने भी नाउम्री ही में कुछ अशआर मौज़ू करने की कोशिश की और उसका शौक पैदा हुआ, मगर आपका मक़सदे हयात आलमे इस्लाम के अहम मारके सर करना था न कि यह शेरख़्वानी इसलिए इस शुग़्ले बेहासिल से मोहतात रहना ज़रूरी था। कारवाने ज़िन्दगी में हज़रत मौलाना (रह0) लिखते हैं:

"उस ज़माने में मुशायरों का बड़ा ज़ोर था। ख़ुद हमारे छोटे से गांव में कई मुशायरे हुए। देखा–देखी मैंने भी कुछ लिखने की कोशिश की, मगर अल्लाह तआला बड़े भाई साहब जज़ाए ख़ैर दे कि उन्होंने बहुत सख़्ती से रोक दिया और यह शुग़्ल बेहासिल जारी न रह सका।

(कारवान–ए–ज़िन्दगी: 1/95)

इसके बाद गरचे हज़रत मौलाना (रह0) का शेर व शायरी से बाज़ाब्ता इस्तेग़ाल न रहा, ताहम आपकी तहरीरें व तक़रीरें, निजी मजलिसें और कभी–कभी नालाए नीम शबी में आपका शेरी ज़ौक़ उभर कर सामने आ जाता है। बरवक़्त अशआर का इस्तेहज़ार और बाज़ मर्तबा मौक़े की मुनासबत से अल्फ़ाज़ की हल्की तब्दीली

से शेर की मानवियत में इज़ाफ़ा पैदा करने का हुनर हज़रत मौलाना को बख़ूबी हासिल था। ऐसा लगता कि यह आप ही की तख़लीक़ है।

हज़रत मौलाना की शहरआफ़ाक़ तस्नीफ़ "पुराने चराग़" उनके मज़ाक़ शेर व सुख़न का भी शाहकार है, जिसमें जगह–जगह उनके अश्हबे क़लम से बरमहल व बरजस्ता अश्आर निकलते जाते हैं, मुफ़्ती अमीनुल हुसैनी जो ताउम्र क़िब्ला–ए–अव्वल बैतुल मुक़द्दस के लिए सीना सिपर रहे, उनके तज़किरे के एख़्तेताम हज़रत मौलाना मीर तक़ी मीर के एक शेर से इस तरह करते हैं जिससे मालूम होता है कि यह शेर उन्हीं के लिए कहा गया है, आप लिखते हैं:

"जहां तक मसअला फ़िलिस्तीन और बैतुल मुक़द्दस की बाज़याबी के लिए जद्दोजहद का सवाल है तो उनको यह कहने का हक़ है कि:

जो तुझ बिन जीने को कहते थे हम
सो उस अहद को हम वफ़ा कर चले।

(पुराने चराग़: 2/88)

1984ई0 में जब हज़रत मौलाना का आलमी राब्ता–ए–अदबे इस्लामी के इजलास में शिरकत के लिए तुर्की का सफ़र हुआ और हज़रत मौलाना के ख़िताब की बारी आयी तो बक़ौल मुफ़क्किरे इस्लाम "मेरे एक तरफ़ एक मुमताज़ तुर्क अदीब व अहले क़लम बैठे थे, दूसरी तरफ़ मशहूर अरब मुसन्निफ़ और इस्लामी मुफ़क्किर मुहम्मद कुतुब रौनक़ अफ़रोज़ थे।"

(कारवाने ज़िन्दगी: 3/165)

ऐसे मौक़े पर हज़रत मौलाना ने बरजस्ता अल्लामा इक़बाल के एक शेर से अपनी बातचीत का आग़ाज़ किया, जिससे ज़्यादा बेहतर उस मजलिस के लिए कोई और शेर मौज़ू न हो सकता था, आपने कहा:

अता मोमिन को फिर दरगाहे हक़ से होने वाला है
शिकवा–ए–तुर्कमानी, ज़हने हिन्दी, नत्क़े ऐराबी

इसमें कोई शुब्हा नहीं कि हज़रत मौलाना सुख़न नवाज़ थे, वह शेर व सुख़न का ज़ौक़ ही नहीं बल्कि ज़ाएक़ा रखते थे, ताहम अल्लाह तआला ने आपको सन्जी की वहबी सलाहियतें भी अता फ़रमायी थीं, जिसका नतीजा था कि हज़रत मौलाना (रह0) अक्सर व बेशतर बरजस्ता अशआर में इस तरह जुज़्वी तरमीम कर देते थे कि माने का रुख़ ही बदल जाता था और शेरी तराकीब की उसूल शिकनी भी होती थी। एक मौक़े पर मीडिया के नुमाइन्दों के सामने हज़रत मौलाना (रह0) ने बातचीत के दौरान में फ़ारसी शेर का एक मिसरा पढ़ा:

ज़ेरे क़दमत हज़ार जान अस्त

फिर उस शेर में एक हर्फ़ की तरमीम के साथ यूं पढ़ा:

ज़ेरे क़लमत हज़ार जान अस्त

इस तरमीम के बाद हज़रत मौलाना (रह0) ने सहाफ़ियों से ख़िताब किया:

"आपके क़लम के नीचे हज़ार जाने हैं, इसलिए मैं कहूंगा कि एहतियात से काम लें।"

(इन्सानियत की मसीहाई: 261)

एक मौक़े पर मक्का मुकर्रमा में किसी के यहां दावत की मुनासबत से हज़रत मौलाना ने मोटर पर कहीं जाते हुए बरजस्ता एक मस्दस भी कही जो दरअस्ल जिगर मुरादाबादी (रह0) के एक शेर के वज़न पर है।

सबको मारा जिगर के शेरों ने
और जिगर को शराब ने मारा

इसी शेर के वज़न पर हज़रत मौलाना (रह0) ने यूं क़ाफ़िया बांधा:

आशिकों को शबाब ने मारा
फ़ासिक़ों को शराब ने मारा
आलिमों को किताब ने मारा
मुन्शियों को हिसाब ने मारा
हम जो अब तक बचे रहे सबसे
हमको रोटी कबाब ने मारा।

(मजालिसे इल्म व इरफ़ां: 276)

हज़रत मौलाना (रह0) को शायरों में अल्लामा इक़बार (रह0) से सबसे ज़्यादा मुनासबत थी, इसलिए कि कलामे इक़बाल आपके अक़ीदे व फ़िक्र से हमआहंग और शऊर व एहसास का हमनवा था। यही वजह है कि हज़रत मौलाना (रह0) ही वह वाहिद शख़्सियत हैं जिन्होंने अरब दुनिया में इक़बाल फ़हमी की दाग़बेल डाली, आपकी मशहूर तस्नीफ़ "रवाए इक़बाल" अदब, फ़िक्र और दावत का एक इत्र नीज़ मजमूआ है। इराक़ के शायर सुल्तान नजफ़ी कहते हैं:

"इक़बाल को इस किताब को पढ़ने के बाद मैं शायरे इस्लाम समझता हूं।"

(कारवाने अदबे इस्लामी (2001–2002) सफ़ा: 296)

उर्दू में यह किताब "नुकूशे इस्लाम" के नाम से है जो बिलाशुब्हा अफ़कार व मआनी की बुलन्दी के साथ उर्दू अदब का गिरांक़द्र सरमाया है।

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

फ़िलिस्तीन का मंज़रनामा

जर्मन यहूदी मूसा हेस (Moses Hess) ने रोम और येरूशलम (Rome and Jerusalem) के नाम से एक किताब लिखी जो 1862ई0 में छपकर मार्केट में आयी। इस किताब में यहूदियों की आलमी हुकूमत का तसव्वुर पेश किया गया और उसका मरकज़ी मक़ाम फ़िलिस्तीन की सरज़मीन को बताया गया है, यह तसव्वुर गोया दुनिया भर के यहूदियों के दिल की पुकार थी, चुनान्चे बहुत जल्द उसे कुबूले आम हासिल हुआ, और अवामी दिलचस्पी का मौज़ूअ बन गया, फिर पूरी बेबाकी के साथ उस मौज़ू पर लिखने और बोलने का सिलसिला शुरू हो गया। 1896 में इस सिलसिले की सबसे मशहूर किताब "जैम श्रमूपी जंजम" (यहूदी रियासत) मंज़रे आम पर आयी थी जिसका मुसन्निफ़ मारूफ़ यहूदी सहाफ़ी थ्योडोर हर्ज़ल (Theodor Herzl) था, उसने अपनी किताब में यहूदी रियासत के जुग़राफ़ियाई व नज़रयाती हुदूद के ख़द व ख़ाल को नुमाया कर–कर के पेश किया और उसकी सरहदें मग़्रिबी रूस के पहाड़ी सिलसिले कोहे ओराल (Ural Mountains) से लेकर नहरे स्विज़ तक वसीअ कर दीं।

थ्यूडोर हर्ज़ल ने अपने नज़रिये की इशाअत में हर मुमकिन तरीक़ा अख़्तियार किया, उसकी कोशिशें रंग लाईं और यहूदी पूरी संजीदगी के साथ उसकी जानिब मुतवज्जा हुए जिसकी अमली तस्वीर 1897 में स्वीज़रलैंड में सहयूनी कांफ्रेंस का इन्क़िाद है, इस कांफ्रेंस में फ़िलिस्तीन पर यहूदी क़ब्ज़े और इस्राईल के क़याम की क़रारदार मंज़ूर हुई।

कान्फ्रेंस की कामयाबी के बाद सहयूनियत ने अपने बाल व पर खोल दिये और फ़िलिस्तीन के क़ब्ज़े की अमली शक्लें शुरू हुईं, इस वक़्त सारी दुनिया सहयूनी इक़दामात पर ख़ामोश तमाशाई बनी रही और इस ख़ामोशी की अहम वजह यहूदियों से छुटकारा हासिल करने की आलमी ख्वाहिश थी, क्योंकि यहूदी बारी–बारी अलग–अलग क़ौमों को डस चुके थे, साज़िश, तख़रीबकारी उनकी फ़ितरत थी, न किसी हाकिम से ख़ुश होते और न कोई हुक्मरां उनकी तरफ़ से मुतमईन रहता, मुल्क का अमन व अमान उनकी वजह से हमेशा ख़तरों में घिरा रहता, यह लोगों के बच्चों को अग़वा करके क़ुर्बानियों की न सिर्फ़ भेंट चढ़ा देते थे बल्कि साज़िश और मकर के मैदान में इतने आगे थे कि पानी के चश्मों और तालाबों में ज़हर भी मिला देते थे। इसीलिए सारी आलमी बिरादरी उनसे छुटकारा और निजात चाहती थी, इसलिए तमाम क़ौमों ने अपनी आफ़ियत इसी में समझी कि यहूदी बला को अरबों पर मुसल्लत कर दिया जाए और उनका तमाम मकर व फ़रेब अरबों तक महदूद हो जाए। इसीलिए यूरोप ने यहूदियों की ख़ास मदद की और उनको अरब रियासतों में अपना मरकज़ बनाने की हर मुमकिन मदद फ़राहम की। पहली जंगे अज़ीम के दौरान यहूदियों ने जर्मनी के ख़िलाफ़ बर्तानिया से मुआहिदा किया जिसकी रो से बर्तानिया ने ऐलाने बिलफ़ोर में सहयूनी अग़राज़ व मक़ासिद की हिमायत का वादा किया। यहूदियों की इस तरह की साज़–बाज़ मुख़्तलिफ़ नवय्यितों में पूरे यरोप में जारी रही यहां तक कि 1948 ई0 में इस्राईल को दुनिया के नक़्शे पर वजूद मिल गया।

अक़वामे मुत्तहिदा (United Nations) ने फ़िलिस्तीन पर यहूदियों के क़ब्ज़े को क़ानूनी रंग देने के लिए आस्ट्रेलिया, कनाडा, यूगोस्लाविया, हिन्द, हालैण्ड और ईरान समेत चंद दीगर रियासतों के नुमाइन्दों पर मुश्तमिल एक कमीशन तश्कील दिया, इस कमीशन के क़याम का मक़सद फ़िलिस्तीन के ज़मीनी हालात से उकफ़ होना और वहां मुक़ीम यहूदियों और फ़िलिस्तीनियों का मौक़िफ़ को समझना था। फ़िलिस्तीन का दौरा करने के बाद यह कमीशन किसी मुशतरका नतीजे तक न पहुंच सका और दो अलग–अलग राय में तक़सीम हो गया, एक राय यह

थी कि फ़िलिस्तीन को दाख़िली तौर पर अरबी और यहूदी दो हुकूमतों में तक़सीम कर दिया जाए और बैतुल मुक़द्दस को दारुल हुकूमत क़रार दिया जाए, जबकि दूसरी राय फ़िलिस्तीन को मुस्तक़िल तौर पर यहूदी और अरबी नामी दो हिस्सों में तक़सीम करने की थी। यहूदियों ने इस दूसरी राय को सराहते हुए मुस्तक़िल यहूदी रियासत के क़याम ऐलान कर दिया और खुल कर मैदाने सियासत और मैदाने जंग में उतर आए। अक़वामे मुत्तहिदा ने भी यहूदियों को मायूस नहीं किया और तक़सीमे फ़िलिस्तीन के फ़ार्मूले को मंजूर कर लिया।

इसी साल बर्तानिया ने फ़िलिस्तीन से निकलते हुए अपना तमाम तर जंगी साज़ोसामान यहूदियों के हवाले कर दिया यह हथियार यहूदियों के हाथों में पहुंचने की देर कि उन्होंने फ़िलिस्तीनी मुसलमानों पर शबे ख़ून मारना शुरू कर दिया और लगातार मुसलमानों की इमलाक पर क़ाबिज़ होते चले गए। इस क़त्ल व लूटपाट की नुमायां मिसाल जिनीन नामी कैम्प है।

इस्राईल ने अपना वजूद मनवाने और अपनी सरहदों को वसीअ करने के लिए ज़ुल्म व बरबरियत की सारी हदें पार कर दीं। उसकी ज़्यादतियों का अंदाज़ा इराक़ लेबना (जहां के कैम्पों और उनसे मुलहिक़ इलाक़े की आबादी को "साहिली पट्टी" के नाम से भी जाना जाता है) और शाम व मिस्र के कैम्पों में पनाहगुज़ीं फ़िलिस्तीनियों की हालते ज़ार से लगाया जा सकता है जहां ज़िन्दगी की बुनियादी ज़रूरतों की ज़बरदस्त क़िल्लत है, अस्पताल नाक़ाफी है और जो हैं वहां भी बुनियादी सहूलियतें मुकम्मल नही।

इस्राईल के मुसलसल मज़ालिम व दरिन्दगी की कोई इन्तिहा नहीं। यह वह भेड़िये हैं जो मासूम बच्चों और औरतों का शिकार करते हैं और जब कभी यह झुंड के झुंड बनाकर हमलावर होते हैं तो इसे सिक्यूरिटी आपरेशन का नाम दे देते हैं और फिर इस आपरेशन में वह कीमियाई हथियार, मिज़ाइल, कलस्टर बम, डेज़ीकटर बम, फ़ासफ़ोरस बम, राकेट, एफ़ 16, एफ़ 18 लड़ाकू जहाज़ और हर तरह के जंगी हथियारों का खुला इस्तेमाल करते हैं, जिसमें बेगुनाह इन्सानों का खून पानी की तरह बहता है और सैकड़ों जाने भूख व प्यास में एड़िया रगड़–रगड़ कर दम तोड़ देती है।

हालिया दिनों में (Operation Breaking Down) के नाम से इस्राईल ने एक बार फिर फ़िलिस्तीन के ख़िलाफ़ जारिहाना कार्यवाही की है। यह आपरेशन पांच से सात अगस्त तक लगातार तीन दिन तक जारी रहा। इस्राईली वज़ीरे आज़म याएर लैपिड (Yair Lapid) ने बयान देते हुए कहा उनके मुल्क ने दहशतगर्दी के ख़तरे के पेशेनज़र आपरेशन किया है जिसमें एहराफ़ का बारीक बीनी से तअकुब किया जा रहा है। ग़ाज़ा के मुहाजिर जबालिया कैम्प पर इस्राईली फ़िज़ाई की बमबारी में तक़रीबन पच्चीस लोग मारे गए और दो सौ से ज़्यादा बेगुनाह ज़ख़्मी हुए हैं। यह आपरेशन इस्लामी जिहाद नामी तंज़ीम के ख़िलाफ़ था जिसमें तंज़ीम के क़ायद तैसीरुल जबरी भी शहीद हुए हैं, जबकि दूसरी जानिब फ़ौजी छापों में तन्ज़ीम के लगभग बीस लोगों को गिरफ़्तार भी कर लिया गया।

इस्राईल की मुसलसल फ़ज़ाई बमबारी और गोलाबारी और फ़ौजी कार्यवाही में ग़ाज़ा में बहुत से सरकारी व निजी इमारतें तबाह हुईं, दर्जनों लोग मारे गए और बड़ी तादाद में जख़्मी हुए। ग़ाज़ा का वाहिद बिजली हाउस बंद कर दिया गया था जिसकी वजह से ग़ाजा तारीकी में डूब गया था और महसूर पट्टी में आम निज़ामें हयात मुअत्तल, कारोबारे ज़िन्दगी तबाह और आम शहरी बुनियादी ज़रूरतों से महरूम अपने घरों में डरे–सहमे बैठे हुए हैं।

इस्राईल ने सिर्फ़ फ़िलिस्तीनियों के घर नहीं उजाड़े बल्कि उनसे उनके जीने का हक़ ही छीन लिया है। बच्चे बचपन की मासूमियत से महरूम कर दिये गए। औरतों की ज़िन्दगी से अस्मत व हया जैसे अल्फ़ाज़ खुरच कर फेंक दिये गए, नवजवान जवानी के मफ़हूम और उसके तक़ाज़ों से वाक़िफ़ भी न हो पाए और बूढ़े तो बस अपनी ज़िन्दगी का बोझ ढो रहे हैं, ऐसी ज़िन्दगी जिसमें ज़िन्दगी का कोई मफ़हूम नहीं।

इस्राईली जारिहियत की बदौलत फ़िलिस्तीनी सरज़मीन एक बार फिर से लहूलुहान है जबकि बेगुनाह नवजवानों की सरबरीदा लाशों और पाकदामन व बाहया औरतों की आसमान को चीर देने वाली आह व बक़ा पर मुस्लिम हुक्मरानों की ख़ामोशी एक सुलगता हुआ ताज़ियाना बनकर उम्मते मुस्लिमा के जस्दे वाहिद पर बरस रहा है।

नबी करीम (स0अ0व0) की सुन्नतों से दूर होने का नतीजा

शेख़ुल इस्लाम जस्टिस मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी

"हमने सुन्नतों को चन्द ज़ाहिरी सुन्नतों की हद तक महदूद कर लिया है। मसलन सुन्नत है कि मिस्वाक करना चाहिए, दाढ़ी रखनी चाहिए और ज़ाहिरी वज़अ–क़तअ सुन्नत के मुताबिक़ करनी चाहिए। यह सब सुन्नतें हैं उनकी अहमियतों से भी जो इनकार करे वह सुन्नतों से नावाक़िफ़ है, लेकिन सुन्नतें इस हद तक महदूद नहीं। आम ताल्लुक़ात और मामलात में नबी करीम (स0अ0व0) का जो तर्ज़े अमल था, वह भी रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की सुन्नत का एक बहुत बड़ा हिस्सा है। और जिस एहतिमाम के साथ दूसरी सुन्नतों पर अमल करने का दिल में दाइया पैदा होता है उससे भी ज़्यादा एहतिमाम के साथ इस सुन्नत पर अमल करने की फ़िक्र करनी चाहिए कि बुराई का बदला बुराई से न दें बल्कि बुराई बा बदला हुस्ने सुलूक से दें। सुन्नत के मुताबिक़ अच्छाई से दें। अब ज़रा हम अपने गिरेबानों में झांककर देखें कि हम इस सुन्नत पर कितना अमल कर रहे हैं। हमारे साथ अगर किसी ने बुराई की है तो कितना इन्तिक़ाम का जज़्बा दिल में पैदा होता है और कितनी उसको तकलीफ़ पहुंचाने की कोशिश दिल में करते हैं, अगर ग़ौर करो तो मुआशरे के फ़साद का बहुत बड़ा सबब यह है कि हमने नबी करीम (स0अ0व0) की इस सुन्नत को छोड़ दिया है। हमारी सोच यह होती है कि उसने चूंकि मेरे साथ बुराई की है, मैं भी उससे बुराई करूंगा, उसने मुझे गाली दी है मैं भी दूंगा, उसने मुझे मेरी शादी पर क्या तोहफ़ा दिया था तो मैं भी उतना ही दूंगा और उसने शादी पर तोहफ़ा नहीं दिया था तो मैं भी नहीं दूंगा, इसका मतलब यह हुआ कि यह सबकुछ बदला करने के लिए हो रहा है, बदला करने वाला अस्ल में सिलारहमी करने वाला नहीं होता। हदीस में रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने यह फ़रमाया है कि हक़ीक़त में सिला रहमी करने वाला वह शख़्स है कि दूसरा तो क़तअ रहमी कर रहा है और रिश्तेदारी के हुक़ूक़ अदा नहीं कर रहा है और यह जवाब में क़तअ रहमी करने के बजाए उसके साथ अच्छा मामला कर रहा है। अस्ल में सुन्नत सिर्फ़ यह नहीं है कि आसान–आसान सुन्नतों पर अमल कर लिया जाए बल्कि हर एक सुन्नत पर अमल की फ़िक्र करनी चाहिए और इन्सान उस सुन्नत के जितना करीब होगा उतना ही मुआशरे का फ़साद ख़त्म होगा। ग़ौर करके देख लो और तर्जुबा करके देख लो कि जो बिगाड़ फैला हुआ है वह जनाब रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की सुन्नतों से दूर होने का नतीजा है।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के बारे में आता है कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) माफ़ कर देते और दरगुज़र से काम लेते, कोई कुछ भी कह दे लेकिन हुज़ूर (स0अ0व0) जवाब नहीं देते और जो अल्लाह के वली होते हैं वह नबी करीम (स0अ0व0) के मुत्तबेह होते हैं और उनका तरीक़ा भी यही होता है। अल्लाह तआला अपनी रहमत से उसका कुछ हिस्सा हमको भी अता फ़रमा दे।"

(इस्लाही ख़ुत्बात: 12/147–151)

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 09 | September 2022 | Volume: 14

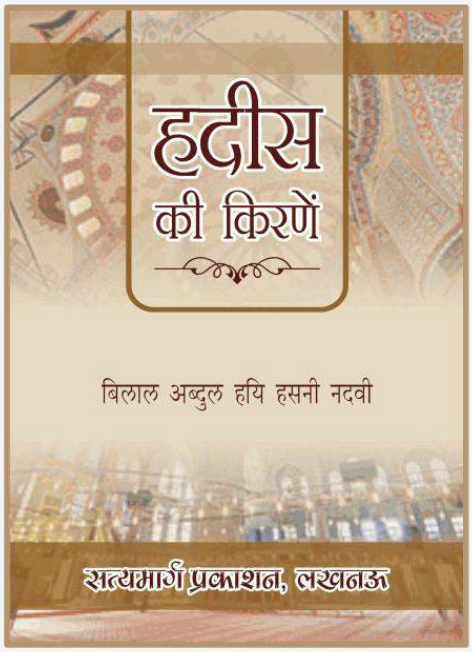

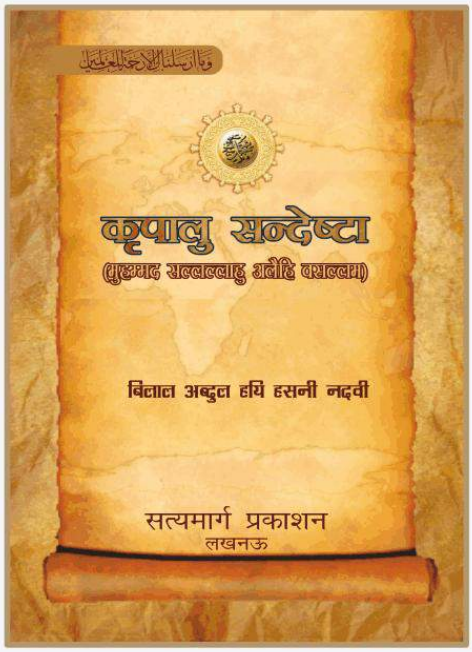

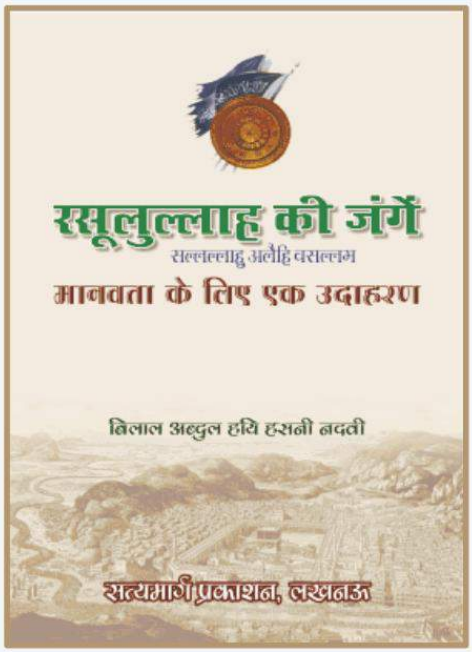

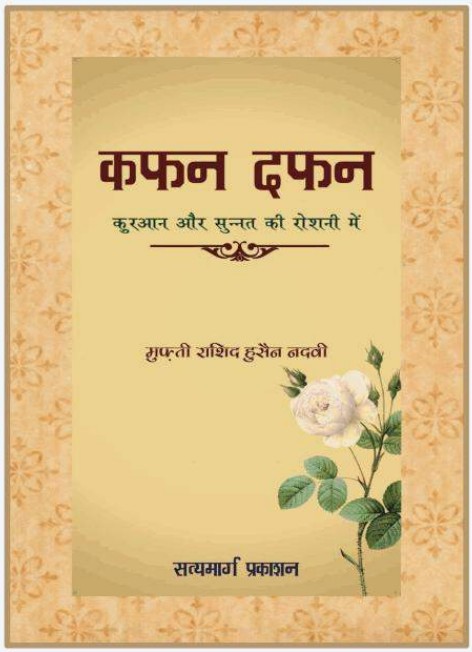

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.